Digitized by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

॥ ओ३म् ॥

जन ज्ञान

साप्ताहिक

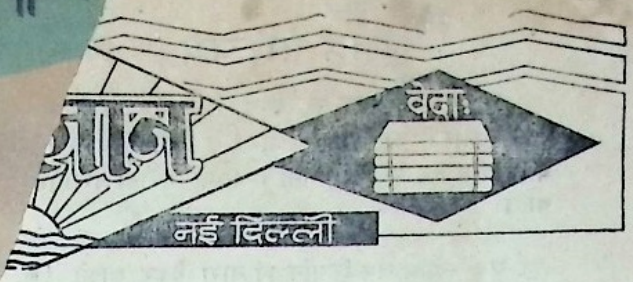

२१ मार्च १९७६
रविवार ९ चैत्र २०३२
ल्य ५० पैसे

१९७६ : ९ चैत्र २०३२ ● अंक ५

जो कहते हैं वह कीजिए !

हम प्रायः कहते हैं कि कोई हमारी बात नहीं सुनता ! हमारा प्रभाव नहीं ड़ता । इस सब के लिए हम प्रायः दूसरों को दोष देते हैं, पर हमने कभी यह नहीं सोचा कि इसके लिए कहीं हम स्वयं ही तो दोषी नहीं हैं ।

हम गुरुकुलों के गीत गाते रहे हैं । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली पर लेख भी लिखे हैं और भाषण भी दिए हैं । पर कितने व्यक्ति हैं जिन्होंने अपनी उत्तम संतानों को गुरुकुलों में पढ़ाया है । फिर बताइए जनता पर आपका प्रभाव कैसे पड़े ?

संध्या और यज्ञ हमारा साधारण धर्म है । पर कितने हैं जिनके परिवारों में एक समय भी यज्ञ होता है, या सम्मिलित संध्या होती है ?

पिछले १०० वर्षों में जन्म से वर्ण व्यवस्था का उद्घोष करते रहने पर भी कितनों ने अपनी जन्म जाति को छोड़ा है ? बड़े-बड़े नेताओं के साथ जन्म गत जाति का पुछल्ला लगा देखकर किस का सिर लज्जा से नहीं झुक जाता । भाषण देना एक कला है । पर उस कला के पीछे यदि कर्म की शक्ति नहीं है तो वह केवल वाग्जाल रह जाता है । जिसका किसी के भी मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । मन से निकली बात का ही मन पर असर होता है ।

आज हम अपनी शताब्दी मना चुके हैं । बड़े-बड़े प्रदर्शन कर हम सभी पर अपनी धाक भी बिठा सके हैं । पर इतने बड़े राष्ट्र के मन को बदलने के लिए जिस प्रभाव की आवश्यकता थी, उससे हम कोसों दूर हैं ।

७-८ लाख ग्राम हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं । भटकता जन मानस आशा भरी दृष्टि से पलक पाँवड़े बिछा हमें पुकार रहा है । पर क्या हम श्रद्धा से स्वयं को मिटा कर करोड़ों तक जीवन संदेश पहुंचाने के लिए तैयार हैं ।

बड़े-बड़े मंदिर खाली पड़े हैं, विशाल भवनों में झाड़ू देने वाला भी नहीं मिल रहा । किन्तु हम अधिकार-पद-मोह में उलझे सही लक्ष्य विस्मृत कर चुके हैं ।

जीवन का मार्ग केवल एक है कि हमारी कथनी करनी का भेद मिटे । हम जो कहें उसे प्रत्येक मूल्य पर पूरा करें । असत्य से झूठी घोषणाओं से दूर रहकर सत्य का सहारा जिस क्षण हम लेगें, उसी दिन हमारी विजय यात्रा आरंभ हो जाएगी ।

आज आवश्यकता है कि हम सब कुछ भूल जाएं । हमें याद रहे केवल ऋषि दयानन्द का कार्य ! दिन-रात उठते बैठते हम अपने गुरुदेव के लक्ष्य को स्मरण रखें । निराशा छोड़कर आगे बढ़ें, तो सफलता निश्चय ही हमें प्राप्त होगी ।

विजय के लिए काम, त्याग और केवल एक लक्ष्य का स्मरण कर आगे बढ़ो । जो कहो वह करके दिखाओ । कथनी करनी का अंतर जिस दिन दूर हो जाएगा वह दिन हमारे सौभाग्योदय का प्रथम दिवस होगा ।

—राकेशरानी

दूरभाष : ५२८८१९

पता :
वेद मंदिर
१५९७, हरघ्यानसिंह मार्ग
[निकट ३१-नाईवाला]
करौल बाग, नई दिल्ली-५

वार्षिक मूल्य २०)
विदेश में ५ पौंड : हवाई डाक से
३ पौंड : समुद्री डाक से
आजीवन ३०१ रु०
वर्ष १ : अंक ५

९ चैत्र : सम्वत् २०३२
नन्दाब्द : १५१
ष्टि सम्वत् : १९६०८५३०७६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—राकेशरानी

समर्पण !

त्वं अग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन्त्सता ।
सखा सख्या समिध्यसे ।।

हे (अग्ने) प्रकाश युक्त जीव । (हि) सचमुच (त्वं) तू (अग्निना) प्रकाश स्वरूप (विप्रेण) मेधावी-चित्स्वरूप (सता) सत्स्वरूप (सत्या) समान ख्याल वाले, आनन्द प तथा आनन्द युक्त स्नेही परमेश्वर से युक्त होकर (ग्नि: विप्र: सत्सत्ता) अग्रणी, मेधावी, ज्ञानी, सद् गुण-ष्ट तथा परमात्मा के समान गुणों वाला अर्थात मय होकर (समिध्य से) शोभित होता है ।

व्याख्या

! गहन निशा में तम के बीच, भटकता क्यों है । तू प्रकाश युक्त है, तेरी समस्त-साधना, कामना प्रकाश से भरी हुई है । विश्व की चल में, धधकती हुई ज्वालाओं ने तुझे भस्म र तू क्यों घबराता है अनजान ।

गुण समूहों का वह अद्भुत कोष संग्रहीत को नव चेतना से भर देगा ।

तष्क में विभ्रम पैदा हो, तू राह भूलने लता तेरे अंतस में पैदा हो जाए तो त, प्रभु दत्त मेधा का आश्रय ले, व, उल्लास और हास भरी ।

लते हुए हृदय में जब किसी से देकर सभी कुछ पाने की अभि- तेरी व्याकुलता में तुझे मिलेगा ी ! तू उसे मिलना, कुछ ें । अपने जीवन की सारी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
जनराज
वेदाः
हिन्दी साप्ताहिक
नई दिल्ली

वर्ष १ ● रविवार २१ मार्च, १९७६ : ९ चैत्र २०३२ ● अंक ५

जो कहते हैं वह कीजिए !

हम प्रायः कहते हैं कि कोई हमारी बात नहीं सुनता ! हमारा प्रभाव नहीं पड़ता । इस सब के लिए हम प्रायः दूसरों को दोष देते हैं, पर हमने कभी यह नहीं सोचा कि इसके लिए कहीं हम स्वयं ही तो दोषी नहीं हैं ।

हम गुरुकुलों के गीत गाते रहे हैं । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली पर लेख भी लिखे हैं और भाषण भी दिए हैं । पर कितने व्यक्ति हैं जिन्होंने अपनी उत्तम संतानों को गुरुकुलों में पढ़ाया है । फिर बताइए जनता पर आपका प्रभाव कैसे पड़े ?

संध्या और यज्ञ हमारा साधारण धर्म है । पर कितने हैं जिनके परिवारों में एक समय भी यज्ञ होता है, या सम्मिलित संध्या होती है ?

पिछले १०० वर्षों में जन्म से वर्ण व्यवस्था का उद्घोष करते रहने पर भी कितनों ने अपनी जन्म जाति को छोड़ा है ? बड़े-बड़े नेताओं के साथ जन्म गत जाति का पुछल्ला लगा देखकर किस का सिर लज्जा से नहीं झुक जाता । भाषण देना एक कला है । पर उस कला के पीछे यदि कर्म की शक्ति नहीं है तो वह केवल वाग्जाल रह जाता है । जिसका किसी के भी मन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । मन से निकली बात का ही मन पर असर होता है ।

आज हम अपनी शताब्दी मना चुके हैं । बड़े-बड़े प्रदर्शन कर हम सभी पर अपनी धाक भी बिठा सके हैं । पर इतने बड़े राष्ट्र के मन को बदलने के लिए जिस प्रभाव की आवश्यकता थी, उससे हम कोसों दूर हैं ।

७-८ लाख ग्राम हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं । भटकता जन मानस आशा भरी दृष्टि से पलक पाँवड़े बिछा हमें पुकार रहा है । पर क्या हम श्रद्धा से स्वयं को मिटा कर करोड़ों तक जीवन संदेश पहुंचाने के लिए तैयार हैं ।

बड़े-बड़े मंदिर खाली पड़े हैं, विशाल भवनों में झाड़ू देने वाला भी नहीं मिल रहा । किन्तु हम अधिकार-पद-मोह में उलझे सही लक्ष्य विस्मृत कर चुके हैं ।

जीवन का मार्ग केवल एक है कि हमारी कथनी करनी का भेद मिटे । हम जो कहें उसे प्रत्येक मूल्य पर पूरा करें । असत्य से झूठी घोषणाओं से दूर रहकर सत्य का सहारा जिस क्षण हम लेगें, उसी दिन हमारी विजय यात्रा आरंभ हो जाएगी ।

आज आवश्यकता है कि हम सब कुछ भूल जाएं । हमें याद रहे केवल ऋषि दयानन्द का कार्य । दिन-रात उठते बैठते हम अपने गुरुदेव के लक्ष्य को स्मरण रखें । निराशा छोड़कर आगे बढ़ें, तो सफलता निश्चय ही हमें प्राप्त होगी ।

विजय के लिए काम, त्याग और केवल एक लक्ष्य का स्मरण कर आगे बढ़ो । जो कहो वह करके दिखाओ । कथनी करनी का अंतर जिस दिन दूर हो जाएगा वह दिन हमारे सौभाग्योदय का प्रथम दिवस होगा ।

—राकेशरानी

सम्पादक
राकेश रानी

सह-सम्पादक
कु० आभा
दूरभाष : ५६६६३९

पता :
वेद मंदिर
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
[निकट ३१-नाईवाला]
करौल बाग, नई दिल्ली-५

वार्षिक मूल्य २०)
विदेश में ५ पौंड : हवाई डाक से
३ पौंड : समुद्री डाक से
आजीवन ३०१ रु०
वर्ष १ : अंक ५

९ चैत्र : सम्वत् २०३२
नन्दाब्द : १५१
सृष्टि सम्वत् : १९६०८५३०७६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चित्र परिचय

इस बार मुख पृष्ठ पर चित्र है—स्व० पं० लाल बहादुर शास्त्री का। आप भारत के द्वितीय प्रधान मंत्री थे। गरीब देश के गरीब नेता। जिन्हें गरीबी पर गौरव था।

जय जवान, जय किसान का नारा देकर आपने देश की समस्याओं का हल खोजा था। असमय ही षड़यन्त्रों का ग्रास बन आप शहीद हो गए। भारत आज भी उन्हें प्यार से स्मरण करता है।

अंतिम पृष्ठ पर चित्र है। हमारी आर्थिक प्रगति के आधार वृषभ का। कला का यह अद्भुत प्रतीक जीवित प्रेरणा है—

—सम्पादक

दयानन्द चित्र दर्शन

[अब छप कर तैयार है]

●

७२ पृष्ठ : ५ रंगों में छपी

एक ऐसी पुस्तक : जैसी पिछले १०० वर्ष में नहीं छपी : सर्वश्रेष्ठ कागज पर सुनहरी बढ़िया कपड़े की जिल्द और

मूल्य : केवल २० रुपए

किन्तु १५ अप्रैल १९७६ तक का समय बढ़ा दिया है।

६००) की १०० २००) की २५

३५०) की ५० १००) की १०

और १५) की एक प्रति

शीघ्र से शीघ्र मंगा लें : स्टाक थोड़ा है।

दयानन्द संस्थान

नई दिल्ली—११०००५

अपनी बात

—भारतेन्द्र

भाग्य कर्म का मेल नहीं है,
नचा रही है नटी सभी को,
कठपुतली सी घुमा रही है।

नीचे ऊपर आगे पीछे
बड़े-बड़ों को चला रही है।

काम नहीं, अब बातों पर ही,
धरा-कर्म का रथ चलता है,
जो जितनी बातें कर सकता,
उतना ही आगे बढ़ता है।

कर्म शून्य में सिसक रहा है,
धर्म गगन में दूर खड़ा सा,
प्रिय अधर्म को धर्म रूप में,
देख-देख कर, सोच रहा है।

कष्ट-क्लेश, छलना नर्तन में,
जीवन का वन ज्वाला सा है,
प्राण सुधा का नन्दन कानन,
विष पूरित कटु हाला सा है।

नीरवता में नर्तन युग का,
अभिनय जीवन का दर्शन है,
सत्य स्वप्न है, स्वप्न सत्य है,
मृत्यु मार्ग ही सुखद चरण है।

प्राणों की मादक सी पीड़ा,
आज बनी अपना स्वभाव है,
भाव भावना, भूल गए सब,
जीवन केवल शून्य भाव है।

कर्म सिद्धि ही भाग्य नटी को,
फिर से पाठ पढ़ा सकती है,
ज्ञान दीप्ति जय कर्म भाव की,
हमको दीप दिखा सकती है।

काश कि निद्रा तोड़ सकें हम,
कर्म भाव का बल पहचानें।
कठपुतली के खेल न बनकर,
भाग्य स्वयं निर्माण करें हम।
जग का अब कल्याण करें हम!

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

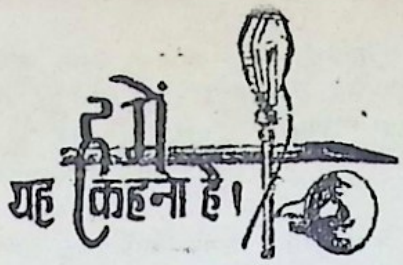

ग्रामों की सुधि लो !

भारत की आत्मा ग्रामों में रहती है। धर्म प्राण जनता का निवास भी ग्रामों में है और अज्ञान-अंधविश्वास का डेरा भी ग्रामों में ही लगा है।

देश के सुधार का अर्थ है ग्रामों का सुधार ! जो संस्था इन गाँवों की उपेक्षा करेगी, वह स्वयं उपेक्षित हो कर रह जाएगी।

देश में ७ लाख ग्राम हैं, जिनमें से ७ हजार में भी आर्यसमाज का संदेश अभी तक नहीं पहुँचा है। लाखों ग्राम ऐसे हैं जो इस का नाम तक भी नहीं जानते।

हमारी सारी योजनाएं नगरों तक सीमित हैं, इस से आगे सोचने के लिए हमारे पास समय ही नहीं है। किन्तु यह भी सच है कि यदि यह नीति न बदली तो भारत के रेखा चित्र में हमारा कोई स्थान न होगा।

आर्य समाजों के अधिकारी और नेता गंभीरता पूर्वक सोचें और कुछ ऐसे पग उठाएं कि सारा भारत सत्य सनातन धर्म के पावन भावों से अनुप्राणित हो जाए।

क्या आप साथ नहीं देंगे ?

बिना धन के साप्ताहिक का प्रकाशन आरंभ कर दिया भावना थी और है कि जनता का सहयोग मिलेगा और हम एक सुन्दर गौरव पूर्ण पत्र द्वारा देश को प्रकाश-प्रभा प्रदान कर सकने में समर्थ होंगे।

धन के बिना कोई भी कार्य चल नहीं सकता। और धन का अभाव ही हमारी सबसे बड़ी समस्या है। जनता भी नारों पर विश्वास अधिक कर रही है, काम का महत्व उस की दृष्टि में नहीं आता। अन्यथा धन के अभाव में हमारे सपने अधूरे नहीं रहते।

फिर भी हमारा यत्न रहा है कि जो भी कहें उसे पूरा करें। वेदभाष्य का विशाल कार्य आप सभी के सहयोग से पूर्ण हुआ। पर उस का ऋण आज भी हमारी चिन्ता का कारण है। सत्यार्थ प्रकाश-ऋषिजीवन हम लाखों की संख्या में वितरित कर चुके हैं। यह सब लागत से अत्यन्त कम मूल्य पर दिये जा रहे हैं।

दयानन्द चित्र दर्शन की लागत १५) के लगभग आयी है। फिर भी ६००) सैकड़ा हम दे रहे हैं, जब कि जिल्द-व्यय ही ४) पड़ रहा है।

बहुत से काम मस्तिष्क में भरे पड़े हैं। जिन के लिए धन चाहिए।

धन का प्रबन्ध आप करें,
और काम हम से लेते रहें,

फिर देखिए कितनी तेजी से फैलता है, आर्यसमाज का संदेश।

साप्ताहिक पत्र की सफलता भी आपके सहयोग पर ही निर्भर है। आप जितने साधन जुटाएंगे उतनी ही तेजी से हम बढ़ सकेंगे। आप स्वयं सोचिए कि आप क्या सहयोग दे सकते हैं ?

१. अधिक से अधिक सदस्य बनाकर।
२. आजीवन सदस्य बनकर या औरों को बनाकर।
३. वेद-प्रचार-निधि में दान भेजकर।

इन तीन प्रकारों से आप हमारी उत्साह पूर्वक सहायता करें। हमारे कार्यों की उपयोगिता समझते हों तो पूरा सहयोग दें।

धन के अभाव में कार्य रुके,

यह कहां तक उचित है, निर्णय स्वयं कीजिए।

—भारतेन्द्र नाथ

प्रेरक-प्रसंग

विश्व प्रसिद्ध इन्जीनियर डा० मोक्षकुण्डम विश्वेश्वरैया 'देर' शब्द तो जानते भी न थे।

एक बार की घटना है—बांध बन रहा था। बहुत तेज वर्षा हुई। गांव के गांव पानी से भर गये। कार्य करने वाले मजदूर प्राणों के मोह से भाग छूटे। महाराजा ने कहा—'बरसात में काम बन्द कर दो।' पर वे न माने। कारण यह था कि इस बांध के विषय में कोलारा की अंग्रेजी कम्पनी से समझौता हुआ था। इसके अनुसार इस बांध से कम्पनी को बिजली मिलती थी। उसने लिखा —'कोई बात नहीं बिजली थोड़ी देर से दीजिए।' लेकिन विश्वेश्वरैया नहीं माने। झुकना उन्होंने सीखा ही कब था ? उन्होंने कहा—'काम निरन्तर चलता रहेगा। कोलारा कम्पनी को समय पर बिजली मिलेगी। बांध पर उसने अपना तम्बू गड़वा दिया। चौबीसों घण्टे यहीं रह कर कार्य किया। परिणामतः वह समय पर ही समाप्त हो गया। ठीक समय पर कम्पनी को बिजली मिली। गरीब किसानों ने दुआएं दी। —ऋ० मो० श्रीवास्तव

भारत के घर-घर में
सत्यार्थ प्रकाश पहुंचाने
का संकल्प लीजिये

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सनातन धर्म की जय !

आदि सृष्टि से जो धर्म मनुष्य मात्र का चला आता है वही सनातन धर्म है । राम-कृष्ण, प्रताप-शिवा इसी धर्म को मानते थे । वशिष्ठ मुनि, विश्वमित्र, भारद्वाज ऋषि इसी धर्म के अनुयायी थे ।

समय के प्रभाव ने इस पवित्र धर्म-धारा में अज्ञान की अनेक दूषित भावनाएँ मिश्रित कर दीं और धर्म का स्वरूप विकृत हो गया ! कुरीतियाँ, पाखंड, हिंसा, अनाचार धर्म के नाम पर फैलते गए ।

किन्तु प्रभु की कृपा से आज से लगभग १०० वर्ष पूर्व भारत में एक महापुरुष ने जन्म लिया और धर्म के विकृत स्वरूप को शुद्ध करने के लिए आर्यसमाज नामक संगठन स्थापित किया ।

सत्यार्थ प्रकाश के "स्वमंतव्यामंतव्य प्रकाश" नामक अध्याय में ऋषि दयानन्द ने लिखा है—

"मेरा कोई नवीन कल्पना वा मतमतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है । किन्तु जो सत्य है उसको मानना मनवाना और जो असत्य है उसको छोड़ना छुड़वाना मुझको अभीष्ट है ।"

महर्षि के यह शब्द सूर्य के प्रकाश की भांति प्रखर हैं, स्पष्ट हैं । आर्यसमाज को जो लोग अलग मत या सम्प्रदाय के रूप में देखते हैं वे इसके सबसे बड़े शत्रु हैं ।

आर्यसमाज की स्थापना ऋषि दयानन्द ने सत्य सनातन धर्म की, वेदोक्त धर्म की रक्षा और प्रचार प्रसार के लिए की थी ।

धरती पर मनुष्यों द्वारा स्थापित नाना मत मतान्तरों का जाल बिछा हुआ है । मनुष्य जाति नाना भेदों में बंटकर अपने हाथों अपना सर्वनाश कर रही है ।

आर्यसमाज इन सब भेद भावों की दीवारों को जड़ से मिटा देना चाहता है । आर्यसमाज वर्ग, वाद, जाति, मत की किसी भी दीवार को मनुष्य और मनुष्य के मध्य खड़ी नहीं देखना चाहता ।

आर्यसमाज मानव मात्र को एक बनाने के लिए स्थापित किया गया है । इस तथ्य को संसार जितना भी शीघ्र समझ ले उतना ही कल्याण है ।

सनातन धर्म सत्य है, अजेय है, अभेद्य है, कल्याणकारी है । उसमें किसी मनुष्य की, देवी-देवता की पूजा का विधान नहीं, वह परमात्मा से मिलने का सीधा रास्ता बताता है ।

सत्य सनातन है, धर्म सनातन है, ज्ञान सनातन है, अपरिवर्तनीय है । जो समय के साथ बदले वह धर्म नहीं है । 'धर्म' तो शाश्वत् है, अमर है । शांति का संगीत, प्यार का सरगम, ज्ञान का संगम और कल्याण का मंदिर है ।

'धर्म' केवल धर्म है उसके आगे-पीछे, नीचे-ऊपर, दायें-बायें और कुछ भी तो नहीं लगाया जा सकता ।

आज भी हम ऋषि दयानन्द के उत्तराधिकारी के रूप में सत्य सनातन धर्म की रक्षा के लिए संघर्ष कर रहे हैं, करते रहेंगे ।

आओ भाईयो, आओ बहनो, आओ और ज्ञान के पावन मंदिर में बैठकर धर्म को धारण करो । धर्म स्वयं तुम्हारी रक्षा करेगा ।

सराहनीय पग

१२ मार्च के दैनिक हिन्दुस्तान में निम्न समाचार छपा है ।

उ० प्र० के शिक्षा संस्थानों में धूम्रपान निषेध

प्रतापगढ़, ११ मार्च । उत्तर प्रदेश के शिक्षा निर्देशक के एक गश्ती पत्र के अनुसार उत्तर प्रदेश के सभी स्कूल कालेजों के अहातों के अन्दर धूम्रपान पर प्रतिबन्ध लगा दिया है ।

गश्ती पत्र में कहा गया है कि अगर कोई आगन्तुक शैक्षणिक संस्थान में धूपम्रान करता है तो उसे विनम्रता से ऐसा न करने को कहा जाना चाहिए ।

हम समस्त आर्य जगत् की ओर से इस आवश्यक पग के लिए उत्तर प्रदेशीय शासन को बधायी देते हैं । हमें आशा है कि ऐसा नियम शीघ्र ही सपूर्ण भारत में लागू हो जाएगा ।

भारतेन्द्र नाथ

वी० पी० मंगाने की आदत छोड़िए !

इस बीच रजिस्ट्री वी० पी० का व्यय बहुत बढ़ गया है । अतः शुल्क समाप्ति का पत्र मिलते ही अपना धन एम० ओ० से भेज दें ।

इससे धन की बहुत बचत होगी । अब वी० पी० पो० में ४ रु० व्यय होगा ।

—सम्पादक

शनिवार को वेदभाष्य करौलबाग कार्यालय में मिलेगा । शनि-रवि छोड़कर शेष दिन ३३७ ए-सूर्यनगर निकट विवेक विहार शाहदरा-गाजियाबाद बार्डर पर मिलेगा—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उत्सव समाचार

—आर्य समाज मख्याली। प्रधान श्री बुधसिंह जी आर्य। श्री राजकुमार मास्टर—मंत्री। श्री गोपाल सिंह आर्य, कोषाध्यक्ष, श्री सुभाष चन्द्र आर्य, पुस्तकाध्यक्ष।

—आर्यसमाज भरुआ सुमेरपुर के श्री गिरिधर गोपाल जी प्रधान। श्री सुन्दर लाल जी—मंत्री। श्री रामेश्वर प्रसाद जी आर्य पुस्तकाध्यक्ष। डा० दयानारायण जी कोषाध्यक्ष चुने गए।

—आर्य समाज गांधी नगर दिल्ली 1 प्रधान श्री जसवन्त राय जी उपप्रधान श्री राम चन्द्र जी तथा श्री सुन्दर दास जी मन्त्री सत्यपाल उपमन्त्री श्री राजेन्द्र पाल तथा श्री शान्ती स्वरूप जी कोषाध्यक्ष, श्री ब्रह्म देव जी तथा पुस्तकालय अध्यक्ष श्री श्याम सुन्दर जी चुने गये।

रोहतक के शताब्दी समारोह में अनेक सम्मेलनों का आयोजन

रोहतक। आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के तत्वाधान में आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह यहां 28 से 30 मई तक धूम धाम से मनाया जायेगा। इस समारोह के मुख्य आकर्षण ये हैं।

१. ऐतिहासिक जलूस (शोभा यात्रा)

शताब्दी समारोह के अवसर पर ऐतिहासिक जलूस निकालने का आयोजन किया गया है, जिसमें हरियाणा के सभी आर्यसमाज, शिक्षण संस्थायें, गुरुकुल, स्कूल, कालेज आदि अपने-अपने नामपट्ट तथा ओ३म् ध्वजों के साथ शामिल होंगे।

२. आर्यसमाज के प्रचारार्थ विविध सम्मेलन

आर्यसमाज के प्रचार तथा प्रसार के लिए वेदप्रचार सम्मेलन गोरक्षा सम्मेलन, शिक्षा-सम्मेलन, सत्यार्थप्रकाश शताब्दी सम्मेलन, युवक सम्मेलन, महिला सम्मेलन आदि का आयोजन किया गया है।

३. आर्यसमाज के इतिहास का प्रकाशन

हरियाणा आर्यसमाज के प्रचार का गढ़ है। यहां के निवासियों ने आर्यसमाज के आवाहन पर हैदराबाद आर्य सत्याग्रह, गोरक्षा सत्याग्रह, कुण्डली बूचड़खाना उन्मूलन सत्याग्रह, चण्डीगढ़ आन्दोलन आदि में बढ़-चढ़कर भाग लिया है। परन्तु इस महत्वपूर्ण कार्य का इतिहास आज तक प्रकाशित नहीं हो सका। अतः इस शताब्दी समारोह के अवसर पर हरियाणा के आर्यसमाज का इतिहास लिखवाया जा रहा है। आर्यसमाज के अधिकारियों से निवेदन है कि अपने आर्यसमाज का इतिहास 31 मार्च तक लिखकर भिजवा दें।

४. आर्यसमाज के कार्य दिग्दर्शन के लिए प्रदर्शनी

भारत भर में हरियाणा में सबसे अधिक आर्यसमाज हैं, सबसे अधिक गुरुकुल हैं, जो कि आर्यसमाज के प्रचार के केन्द्र हैं, सबसे अधिक गोशालायें हैं। झज्जर में स्थापित हरियाणा के एकमात्र पुरातत्व संग्रहालय (ऐतिहासिक सिक्के तथा चित्र) की जानकारी के लिए प्रदर्शनी का भव्य आयोजन किया जायेगा।

५. ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम की दीक्षा।

शताब्दी समारोह तक आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा की ओर से 100 नवीन आर्यसमाजों और 100 दयानन्द धर्मार्थ आयुर्वेदिक औषधालयों की स्थापना, 100 ऐसे ग्राम जहां प्रत्येक घर में सत्यार्थप्रकाश होगा, 100 आर्य कार्यकर्त्ताओं को ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम का दीक्षा दी जायेगी, स्कूल कालेजों के एक लाख छात्रों को यज्ञोपवीत देकर धूम्रपान, शराब, मांस आदि के परित्याग की प्रतिज्ञाएं दिलवाई जायेंगी, ताकि हरियाणा में आगामी सौ वर्षों में आर्यसमाज के प्रचार का ठोस रचनात्मक कार्य हो सके।

पश्चिम उड़ीसा में आर्ष पाठ्य विधि के एक मात्र निःशुल्क शिक्षण केन्द्र महाविद्यालय गुरुकुल आमसेना, खरिया रोड (कालाहाण्डी) का अष्टम वार्षिक महोत्सव २० से २२ फरवरी तक समारोह के साथ सम्पन्न हुआ, महोत्सव के ऋग्वेद पारायण महायज्ञ की पूर्णाहुति २२ फरवरी को प्रसिद्ध विद्वान श्री स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। पूर्णाहुति के दिन गुरुकुल के संस्थापक व संचालक श्रद्धेय स्वामी धर्मानन्दजी के आह्वान पर बहुत लोगों ने अपने दुर्गुण छोड़ सद्गुण धारण का व्रत किया। गुरुकुल सम्मेलन में ब्रह्मचारी गण के आकर्षक प्रदर्शन बहुत प्रभावशाली हुए, महोत्सव में श्री स्वामी प्रणवानन्द जी, श्री विशिकेशन शास्त्री, बहिन यशोदा देवी रायपुर, श्री शिवधर आर्य भजनोपदेशक बिहार, श्री बालकृष्ण शर्मा भजनोपदेशक नागपुर आदि विद्वान पधारे थे जिनकी उपदेशों से जनता बहुत आकर्षित हुई तथा आर्यसमाज की ओर श्रद्धा बढ़ी।

अधिक से अधिक सदस्य साप्ताहिक जन-ज्ञान के बनाकर सहयोग दीजिए

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जिज्ञासा का समाधान

(जिज्ञासा)—

ऋषि दयानन्द तीन पदार्थ अनादि मानते हैं एक ईश्वर द्वितीय जीव और तीसरा प्रकृति। जीव को ईश्वर से स्वरूप और वैधर्म्य के कारण भिन्न मानते हैं वैसे व्यापक व्यापक सम्बन्ध ईश्वर के साथ उसका हमेशा रहता है। जीव को एक देशी भी मानते है। मुक्ति में भी वह प्रत्येक मुक्त जीव की अपनी अलग सत्ता मानते हैं क्योंकि प्रत्येक जीव अपना निश्चत समय समाप्त कर पुनः संसार में जाता है। —सत्यार्थप्रकाश ॥ (शंका)—इससे क्या यह अर्थ नहीं निकलता कि न केवल जीव ईश्वर से भिन्न है बल्कि हर दूसरे जीव से भी उसकी एक अलग सत्ता है? क्या हम एक जीव के बजाय असंख्य जीवों को अनादि नहीं मानना चाहिए?। क्या कभी ये असंख्य जीव मिलकर एक भी होते हैं या इन की अनादि काल से अलग अलग सत्ता रहती है? क्या जीवात्मा का विभाग और पुनः योग हो सकता है? जीव के गुण और स्वरूप क्या हैं?

—धर्मपाल सिंह
११६७ सेक्टर ८.
रामकृष्णपुरम्, नई दिल्ली

समाधान—

माननीय महोदय!

आप की शंका द्वारा ही आप का समाधान हो रहा है। जीव असंख्य हैं और अनादि हैं। अनादि पदार्थ की सत्ता स्वतन्त्र और भिन्न भिन्न ही रहती है।

जीव जहां आदि है उस की सत्ता भी नित्य है। अनादि नित्य पदार्थ का विभाग कभी नहीं हो सकता। उन की सत्ता संसार और मुक्ति अवस्था में भी पृथक्-पृथक् ही रहती है। योग अनित्य पदार्थों का होता है। नाशवान् अनादि भी नहीं हो सकते। जीव स्वरूप से अल्प है अतः वे अपनी संख्या को नहीं जान सकते। ईश्वर सर्वज्ञ है अतः वह अनादि जीवों की संख्या को जानता है।

(२)जीव का स्वरूप—जो चेतन, अल्पज्ञ, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख दुःख और ज्ञान वाला है तथा नित्य है वह जीव कहाता है—

आर्य्योद्देश्यरत्नमाला क्रम संख्या से जीव चेतन स्वरूप, पवित्र अविनाशी और धार्मिक स्वभाव वाला है। सन्तानोत्पत्ति उनका पालन, शिल्प विद्यादि अच्छे बुरे कर्म हैं। (सत्यार्थ प्रकाश ७ समुल्लास)

(३) न्याय दर्शन १.१.१० में जीव के चिन्ह लिखे हैं इच्छा, द्वेष, प्रयत्न सुख दुःख और ज्ञान ॥

अर्थात् इन चिन्हों से जीव की पहचान होती है।

(४) वैशेषिक दर्शन में न्याय दर्शन में दिए चिन्हों से आगे लिखे चिन्ह दिये हैं—प्राण, अपान, निमेष, उन्मेष, मन, गौत, इन्द्रिय, अन्तविकार, क्षुधा तृष्ण, हर्ष, शोक आदि। इन्हीं से आत्मा की प्रतीती होती है। (सत्यार्थ प्रकाश ७ समुल्लास)

(५) ऋग्वेद १ मण्डल, ५८ सूक्त, ५ वां मन्त्र (भाषा भावार्थ ऋषि दयानन्द) जो अन्तः करण=मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, प्राण अर्थात् प्राणाहिदश वायु, इन्द्रिय अर्थात् ओम आदि दश दश इन्द्रियों का प्रेरक, इनका धारण और नियन्ता कला हैं वह इस देह के जीव हैं ॥

(६)—ऋग्वेद ६. ४७: १८ ॥ (भावार्थ ऋषि दयानन्द)—जीव शरीर शरीर के प्रति तत्स्वभाव वाला होता है। जब बाह्य विषय को देखने की इच्छा करता है तब उसको देखकर तत्स्यरूप ज्ञान उस जीव को होता है। जीव के शरीर में बिजली सहित असंख्य नाड़ियां हैं उनसे यह सब शरीर के समाचार को जानता है ॥

विनीत—जगदेव सिंह सिद्धान्ती

आर्यसमाज के नेता राजनीति छोड़कर आर्यसमाज के प्रति वफादारी निभाएं

गुरुकुल घरौंडा के वार्षिकोत्सव पर दयानन्द संस्थान के अध्यक्ष पं० भारतेन्द्र नाथ का आवाहन

घौंडा ६ मार्च, गुरुकुल के वार्षिकोत्सव पर दयानन्द संस्थान के अध्यक्ष पं० भारतेन्द्र नाथ ने कहा कि आर्यसमाज की प्रगति में सब से बड़ी बाधा हैं हमारे नेताओं का राजनीति प्रेम। आर्यसमाज के कर्णधार यदि राजनीति का मोह छोड़कर पूरे बल से केवल आर्यसमाज के प्रति ही शक्ति का व्यय करें तो सारा संसार "ओ३म्" के झंडे के नीचे आ सकता है।

आप ने कहा कि—यह कितना बड़ा दुर्भाग्य है कि हमारे काम हमारी कथनी के सर्वथा विपरीत होते हैं। संध्या हम करते नहीं, परमात्मा-आत्मा का साक्षात्कार किया नहीं, दूसरों को उपदेश देते हैं, पर अपने आचरण सर्वथा विपरीत हैं, ऐसे में कोई हमारी क्यों मानेगा।

देश की स्थिति पर विचार करते हुए आपने कहा कि—

आज नकली भगवान बढ़ रहे हैं। अंधविश्वास पनप रहे हैं। भोगवाद सब पर हावी है और हमें पद-स्वार्थ-पद सर्वनाश का निमंत्रण दे रहे हैं। किन्तु ऐसे गाड़ी नहीं चलेगी। हमें कुछ करना होगा या मरना होगा। समय की गति को नया मोड़ देने के लिए काम करने का निमंत्रण देते हुए पंडित जी ने कहा कि हम ऋषि दयानन्द के सच्चे शिष्य बनें और केवल उन्हीं को अपना नेता मान कर चलें, तभी आर्यसमाज अपने लक्ष्य में सफल होगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

७ मार्च: देश की राजनीति का लक्ष्य गरीबों का उत्थान : युवा नेता संजय गाँधी का मत

—भूमि सीमा कानूनों पर जून तक पूरी कार्रवाई :

—मुख्य मंत्री सम्मेलन की सिफारिशें

—भारत के ऊपर बम्बई में पुच्छलतारा देखा गया

—परमाणु क्षेत्र में सहयोग पर भारत व कनाडा में समझौता

—देश के विभिन्न स्थानों में हाल में आयकर के छापों में करोड़ों रुपये की बेहिसाब रकम व संपत्ति पकड़ी गई।

—प्रधानमन्त्री द्वारा शिक्षा प्रणाली में निःसंकोच सुधारों पर जोर

८ मार्च: अमरीकी सहायता के लिए भारत घुटने नहीं टेकेगा : श्री टी० एन० कौल की घोषणा

—बस्तर जिले के टिन के बढ़े भन्हारों का पता चला

—चौधरी चरण सिंह रिहा कर दिये गये

—नारों व हारों से पदोन्नति का युग अब आ गया। संजय गाँधी की कांग्रेसी कार्यकर्ताओं की चेतावगी

—श्री इन्द्र कुमार गुजराल : सम्भवतः रूस में भारत के राजदूत होंगे

—किसानों के लिए लाभदायक गोबर गैस का हरियाणा में उपयोग

—अगले महीने बम्बई हाई से तेल निकलने लगेगा

—२० सूत्री कार्यक्रम पर २१ अरब रुपये खर्च होंगे

—९ मार्च : १९७५-१९७६ के सर्वेक्षण में राष्ट्रीय आय में ५-५ प्रतिशत वृद्धि का अनुमान

—स्पेन में दंगे व हड़तालें फैलीं

—प्रधानमंत्री द्वारा संवैधानिक खामियों के निवारण पर जोर

—१० मार्च : फरक्का परियोजना छोड़ने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता : लोक सभा में विदेश मंत्री श्री चह्वाण का आश्वासन

—भारत श्रीलंका समुद्री सीमा पर वार्ता

—हिटलर का सहायक मार्टिन बोमन जीवित

—विदेशी स्रोतों से धन प्राप्ति पर प्रतिबंध का विधेयक राज्य सभा में पारित

—राष्ट्र निर्माण में योग देने की चेतना पैदा करो : राष्ट्रपति का जन संपर्क अधिकारी सम्मेलन में आह्वान

—रूसी विमान दुर्घटनाग्रस्त : १२० मरे

—कर्नाटक में २२ हजार बंधुआ मजदूर मुक्त

—कल्लू में हिमपात

११मार्च : रेल के यात्री किराये में वृद्धि नहीं : माल भाड़ा १० प्रतिशत बढ़ा : विदेशो के लिए नयी रेल कम्पनी बनेगी।

—१९७६-७७ में विकास कार्यक्रमों के लिए केन्द्र तामिलनडु २०० करोड़ रुपया देने पर सहमत।

—दिल्ली के जनपथ एक्सचेंज में ८०० नई टेलीफोन लाइनों का उद्घाटन।

—राज्य सभा के लिए १०४ नामांकन पत्र पेश।

—पाँच वर्षों के लिए बंद--रुग्ण चाय बागान सरकार के अधीन

—पाक रक्षा तैयारियों के प्रति भारत सर्तक : रक्षा मंत्री श्री बंसीलाल का लोकसभा में वक्तव्य

१२ मार्च : खरीफ फसल की वसूली का इस वर्ष ऐतिहासिक का इस वर्ष ऐतिहासिक रिकार्ड संभावित : श्री शिन्दे की घोषणा

—माओ भी तेंग विरोधी अभियान में शामिल

—राष्ट्रहित की उपेक्षा कर विदेशी सहकार प्राप्त करने वाली कम्पनियों के विरुद्ध कड़ी कार्रवाई होगी।

१२ मार्च : देश में शराब की खपत में कमी हेतु राज्य सरकारों द्वारा पग। दिल्ली के भील कुरंजा क्षेत्र में लुटेरे परिवार के मुखिया को गोली से उड़ाकर चम्पत

—ठगों और जालसाजों का अन्तर्राष्ट्रीय गिरोह : नई दिल्ली जिला पुलिस द्वारा ६ व्यक्ति बंदी

—उत्तर प्रदेश में डेढ़ लाख से ज्यादा जाली राशन कार्ड बरामद

प्रेरक-प्रसंग

दार्शनिक सुकरात का दाम्पत्य— जीवन सुखमय नहीं था। उनकी पत्नो बड़ी ही कर्कशा थी। वह सदैव उनसे झगड़ती रहती थी। सुकरात से काफी दूर-दूर के व्यक्ति मिलने आते, लेकिन सुकरात की पत्नी सब लोगों के सामने ही लड़ने बैठ जाती। एक दिन कुछ विद्यार्थी सुकरात के पास आये और उनसे बातें करने लगे। तभी सुकरात की पत्नी ने उन्हें भोजन करने के लिए आवाज़ दी। सुकरात विद्यार्थियों के साथ गम्भीर दार्शनिक चर्चा में लीन थे। पत्नी की आवाज उन्हें सुनाई नहीं दी। इस पर उनकी पत्नी उन्हें गालियाँ देने लगी। जब सुकरात पर कुछ असर नहीं पड़ा। तो वह एक बाल्टी पानी भर लाई और सब लोगों के सामने ही उसे सुकरात पर उड़ेल दिया। कुछ लोग सुकरात से उनकी पत्नी की आलोचना करने लगे। किन्तु दार्शनिक सुकरात के चेहरे पर किंचित शिकन नहीं आयी। उन्होंने क्रोधित हुए बिना बड़े ही धैर्यपूर्वक कहा— गड़गड़ाहट के बाद वर्षा होती ही है इसमें नाराज होने की क्या बात है।

—ऋ० मौ० श्रीवास्तव

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—श्री के० नरेन्द्र

वाराणसी का सफल आर्य सम्मेलन

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश की आर्य प्रतिनिधि सभा ने यह फैसला किया कि इस वर्ष उत्तर प्रदेश में तीन बड़े समारोह किए जाएं। इस प्रकार पहला समारोह 'मेरठ में हुआ, दूसरा कानपुर में और तीसरा वाराणसी में। वाराणसी रूढ़िवादी हिन्दुओं का गढ़ कहा जाता है किन्तु जितना सहयोग वहाँ के हिन्दुओं ने आर्य सम्मेलन को सफल बनाने में दिया उसे देखकर तो कोई भी कह देगा कि आज प्रत्येक वर्ग का हिन्दू महर्षि दयानन्द के उपकार को अनुभव करने लगा है। केवल गैर आर्यसमाजी हिन्दू ही क्या वाराणसी के मुस्लिम और ईसाई भाइयों ने भी हार्दिकता से इस सम्मेलन का स्वागत किया। शनिवार के दिन जो जलूस निकला ऐसा वाराणसी के इतिहास में कम ही निकला है। इसका नेतृत्व शहीदे आजम भगतसिंह के भाई उत्तर प्रदेश के मंत्री श्री कुलतारसिंह कर रहे थे।

वाराणसी की जनता ने तीन दिन के अन्दर राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद, उपराष्ट्रपति श्री जत्ती, उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी, उत्तर प्रदेश विधान परिषद् के सभापति डा० वीरेन्द्र स्वरूप, पद्मभूषण डा० सूरजभान जी, श्री कमलापति जी त्रिपाठी, आन्ध्र प्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री पी० वी० नरसिंह राव संसद सदस्य श्री शिवकुमार शास्त्री, स्वामी डा० सत्य प्रकाश जी आदि-आदि को सुना और उनके विचारों से लाभ उठाया। उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री ने पांच लाख का भी दिया। राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद के भाषण को सुनकर लोग वाह-वाह कर उठे। महर्षि को जो श्रद्धांजलि उन्होंने दी उसके लिए आपको जितना धन्यवाद दिया जाय कम है। इस प्रकार यह तीसरा उत्सव भी समाप्त हुआ।

क्रोध एक प्रयोग

क्रोध के विषय में हमें यह समझाया गया है कि यह एक शत्रु है। लड़कर इसे समाप्त करना है। यह बाहर परिस्थितियों से आता है। क्रोध को जीतो। मैं क्रोध करता नहीं कराया जाता है।

क्रोध जीतने के उपाय भी बता दिये हैं—१. जब क्रोध आये १ से १०० तक गिनो। २. क्रोध आने पर एक गिलास ठंडा पानी पियो। ३. चुप रहो। ४. घर से निकल कर निर्जन स्थान पर चले जाओ आदि।

लेकिन तथ्य बिल्कुल उल्टा है। क्रोध को शत्रु नहीं मित्र की तरह जानिये। जब क्रोध मित्र हो जायेगा तब उसे आप समाप्त नहीं कीजियेगा। क्रोध बाहर की परिस्थितियों से नहीं आता, अपने अन्दर से ही प्रकट होता है। हमारे अन्दर प्रेम की मात्रा की भारी कमी है; इसीलिये क्रोध टपक पड़ता है। क्रोध को भगाना नहीं, प्रेम को जगाना है। कोई गाली देता है, आप झट क्रोधित हो जाते हैं; क्यों ? देना उसके बस में है, लेना आपके बस में है—आप गाली मत लीजिये।

एक प्रयोग कीजिये। होश से क्रोध कीजिये। साधारणतः आप क्रोध में पागल हो जाते हैं। तनिक घर जाकर अपनी पत्नी (या कोई) पर क्रोध कीजिये। पहले योजना बनाइये कि इस तरह से थाली फेंकनी है, दूध का गिलास उल्टा दें और कहें—"इसे यहाँ क्यों रखा ?" आपको आश्चर्य होगा कि क्रोध गायब हो गया। जब भी क्रोध आये तो आप सिर्फ उसे देखें—ध्यान पूर्वक, जानें कि कौन क्रोध कर रहा है ? आप ? आर्य ? श्रेष्ठ या छाया ? इस प्रश्न के साथ-साथ क्रोध गायब। क्रोध हो जाता है आपके मूर्च्छावस्था में जैसे ही आपको होश होता है तो आप पछताते हैं।" मुझे क्रोध नहीं करना चाहिये।" तो जागकर क्रोध का अभिनय कीजिये, क्रोध समाप्त।

प्रेरणा प्रद सूक्तियां

—जो मनुष्य अपनी निन्दा सह लेता है, उसने सारे संसार पर विजय करली है।

—वेद व्यास

—कमजोरी सबसे बड़ा पाप है।

—स्वामी विवेकानन्द

—जिसने गर्व किया उसका पतन अवश्य होगा।

—स्वामी दयानन्द

—महल के ऊँचे शिखर पर कौवा बैठ जाए तो वह गरुड़ नहीं बन जायेगा।

—चाणक्य

—मूर्ख की आवाज ऊंची होती है, अध्यक्ष उसे न कोई सुनता और न मूर्ख कहता।

—ग्लैडस्टोन

—संसार में कभी ऐसा व्यक्ति नहीं हुआ न होगा, जिसे जीवन भर केवल सुख या दुख ही मिला हो—सुख दुख तो रथ के दो पहियों के समान है—कभी एक पहिया ऊंचा है तो कभी दूसरा।

—महाकवि कालीदास

—कायर तभी धमकी देता है, जब वह स्वयं को कमजोर समझता है।

—एक महापुरुष

—असफलता से निराश मत होओ—वह तो तुम्हारी क्षमता की कसौटी है।

—रिचट

—अनुभव एक दीपक के तुल्य है जो हमेशा मार्ग प्रदर्शित करता है।

—पैट्रिक हैनरी

—जब तक छुआछूत तुम्हारा धर्म है, रसोई का बर्तन तुम्हरा देवता है, तब तक तुम्हारी उन्नति नहीं हो सकती।

—विवेकानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पाणि-ग्रहण की सात प्रतिज्ञाएँ

(पाणिग्रहण संस्कार के सातों प्रतिज्ञा-मन्त्रों का हिन्दी-पद्यात्मक भावानुवाद)

—वैद्य पं० ब्रह्मानन्दजी, बी० ए०
आयुर्वेदाचार्य (जयपुर)

(१)

'गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तम्'

इस नूतन मंगल प्रभात में;
मलय पवन के झोंकों में;
जीवन की इस मधुमय ऋतु में;
स्नेह राग की किरणों में;
सुख सौभाग्य लालसा से मैं,
सुभग तुम्हारा यह मृदु कर,
सुमुखि ! ले रहा हूं निज कर में,
तुमको हृदय-देश में धर,

मया पत्या जरदष्टिर्यथासः ।

जिससे जीवन की सन्ध्या में,
पतझड़ में जब हों जर्जर,
एक दूसरे से बल लेकर,
चले चलें ले कर में कर ।

भगो अर्यमा सविता पुरन्धिः

स्वयं अर्यमा जगदुत्पादक,
विविध सृष्टि का संचालक,
सम्मुख शोभित विबुध देवगण,
शिष्टाचारों के पालक—

मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ।

सभी मुझे अर्पित करते हैं ।
देवि ! तुम्हारा मंजुल हाथ !
गार्हपत्य के संचालन में,
सदा रहे यह मंगल साथ ।

(२)

भगस्ते हस्तमग्रभीत्
सविता ते हस्तमग्रभीत् ।

भावी जीवन में सुखाय ऐश्वर्यों
का कर लें अर्जन,
वत्सलतामय, स्नेह सौख्यमय,
आत्म सदृश नूतन सर्जन ।

पत्नी त्वमसि
धर्मणाऽहं गृहपतिस्तव ।

आज बसावें चलो यहाँ हम—
छोटा सा निज का संसार ।
रानी हो जिसमें तुम सुन्दरि ।
मैं राजा प्रभूत-सम्भार ।

(३)

'ममेयमस्तु पोष्या मह्यं त्वाऽदात् बृहस्पतिः ।'

'इस अनन्त जग में अगणित हैं
युवा और युवती जन भी,
किससे मिलता कौन, प्रिये ! यह
जाना जा सकता न कभी ।
विस्तृत जग के स्वामी ने ही,
आज हमारा योग किया,
मुझसे पोषण पाने वाली,
तुम्हीं बनो मम एक प्रिया ।'

'मया पत्या प्रजावतिः शं जीव शरदः शतम् ।'

'शतशत वर्ष स्वस्थ रह प्रेयसि !
शुभ कर्मों में सक्त रहें ।
सुन्दर, स्वस्थ, सुशील प्रजा से,
आवृत हम सानन्द रहें ।'

(४)

"त्वष्टा वासो व्यदधाच्छुभेकं बृहस्पतेः
प्रशिषा कवीनाम् ।'

'भगवान् बृहस्पति की करुणा से,
शिक्षा से विद्वज्जन की,
धन, वस्त्र, सौख्य साधन मिलते
साधें होतीं पूरी मन की ।'

'तेनेमां नारी सविता भगश्च सूर्यामिव परिधत्तां
प्रजया ।'

"जैसे पृथ्वी को सूर्य किरण ।
सस्नेह अंक में भरती हैं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

करती हैं पूर्ण अन्न जल से—
बाधा से रक्षित रखती हैं।
वैसे ही तुमको जग-सविता-
सुप्रजावती, सुखवती करे।
जग के कण्टक शूलों से सखि,
निर्मुक्त मृदुल गुणवती करे।"

(५)

"इन्द्राग्नी द्यावापृथिवी मातरिश्वा मित्रा वरुणा भगो अश्विनोभा बृहस्पतिर्मरुतो ब्रह्म सोम"

यह विद्युत्, यह अग्नि और यह,
द्यावापृथिवी सौख्यमयी,
पवन और यह मित्र वरुण,
की शक्ति जगत् की सारमयी।
सोम और गुरु-वृन्द दिखाते,
मार्ग हमें जो युग-युग से,
और ब्रह्म सब जग का पालक,
प्रेम प्रकाशक जो चिर से।

'इमां नारीं प्रजया वर्धयन्तु।'

इस जग की सारी विभूतियां,
मिल अपने सुखकर गुण से,
आप्लावित नित करें बढ़ावें,
तुम्हें प्रजाओं से, धन से।

(६)

"अहं विष्यामि मयि रूपमस्या वेददित् पश्यन् मनसा कुलायम्"

"जीवन का साफल्य और निज—
वंशवृद्धि सम्मुख रख कर,
और मानकर तृप्ति तृपित—
प्राणों की ह्लादमयी सुखकर,
देख रहा हूं व्याप्त प्रिये! तुम
को अपने अन्तर बाहर,
शतदल हृदय पद्म में यह,
अवरुद्ध हुआ है मुग्ध भ्रमर।"

"नस्तेयमद्मि मनसोदमुच्ये स्वयं श्रन्थानो वरुणस्य पाशान्"

"तुमसे क्या कुछ है छिपाव,
जीवन के गहरे भावों का;
इन श्वासों का, प्राणों का सखि!
और सकल व्यवहारों का।
निज पौरुष से अर्जित का ही,
भोग करें निर्भय होकर,
विघ्न निकल सकते हैं कोई
कभी हमें सखि, क्या छूकर?"

(७)

"अमोऽहमस्मि सा त्वं सा त्वमस्यमोहम्।"

"हमने जान बूझ कर सबसे—
सुन्दर, श्रेष्ठ समझ कर ही।
अपनी प्रेम परिधि के शोभन,
निश्चित केन्द्र मान कर ही।
आज परस्पर वरण किया है,
नया चरण हम धरते हैं,
आर्यों की, शिष्टों की विधि से
प्रणय सूत्र में बँधते हैं।"

"सामाहमस्मि ऋक् त्वं"

"तुम हो ऋक् है जिसकी गति—
मति सदा व्यवस्थित अर्थमयी।
मैं हूं नव संगीत तुम्हारा,
जिसकी लहरी साममयी।"

"द्यौरहम्"

"मैं बन जाऊं द्यौ, पृथिवी तुम,
मैं प्रकाश की किरणों से—
आवृत करलूं प्रिये! तुम्हें नव-
दिव्य प्रेम के स्पन्दन से।"

"पृथिवी त्वम्"

"और जहां नर अक्षम है, जो,
असह भार हैं इस जग के—
क्षमामयी, वात्सल्यमयी, तुम
ले लो सखि, पृथिवी बन के।"

"तावेव विवहावहै सह रेतो दधावहै प्रजां प्रजनयावहै पुत्रान् विन्दावहै बहून्। ते सन्तु जरदष्टयः।"

"नई सृष्टि का भार आज हम
लेते अपने कन्धों पर—
है उत्तरदायित्व नई पीढ़ी—
के सर्जन का हम पर।
अतः श्रेष्ठ जो कुछ है जग में,
उसका कर लें अन्तर भाव,
जिससे आयुष्मान् प्रजा हों,
और बढ़ावें मानव भाव।"

(शेष पृष्ठ १३ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चाय हानिकारक है !

(श्री 'वैद्यराज')

□□□

पैसे की तंगी का जमाना है, अतः कम खर्च में काम चलाने की ओर रुझान होना स्वाभाविक है। इसके आधार पर भी आजकल चाय का प्रचार बढ़ रहा है। एक कहावत सी चल पड़ी है कि चाय में सस्ते में काम चल जाता है। प्रश्न होता है कि चाय पीना किससे सस्ता होता है ? कारण कोई चीज सस्ती है या मंहगी यह बात तो सापेक्ष होती है। क्या प्राकृतिक पेय पानी से भी चाय सस्ती होती है ? स्पष्ट है कि नहीं। तब चाय सस्ती है, कहने वाले का मतलब सम्भवतः वह दूध से सस्ती है यह होता है।

दूध के बदले चाय—यह ठीक है कि दूध महँगा है। पर चाय तो दूध का स्थान नहीं ले सकती। मानव शरीर के तत्त्वों में होने वाली कमी को दूध पूरा करता है। वह शरीर का पोषण करता है और बल देता है। किन्तु चाय में एक धीमा जहर होता है जो धीरे-धीरे शरीर पर भयानक असर करता है। चाय का यह जहर कैफीन है। यह कैफीन काफी, कोको और कोला में भी होता है। चाय में वह १।।, काफी में दो तथा कोको और कोला में १ प्रतिशत होता है।

कोको व कोला में भी जहर—इसे दूसरी तरह समझायें, अर्थात् हर २।। तोले सूखी चाय में ७ से ८ ग्रेन तक, काफी में ३ से ६ ग्रेन तक तथा कोको और कोला में ४४ ग्रेन कैफीन होती है। इस प्रकार एक कप चाय में लगभग ३ ग्रेन और कोको व कोला की साधारण मात्रा में ३ ग्रेन कैफीन होती है।

कैफीन का बुरा असर—इस कैफीन की ५ से ७ ग्रेन तक की मात्रा भी शरीर में पहुँच जाने पर रक्त संचालन में तीव्रता और मन में उत्तेजना पैदा करती है। हृदय की धड़कन भी बढ़ जाती है जिससे हृदय भारी हो जाता है मस्तिष्क में भी कभी पीड़ा होने लगती है।

स्मरण शक्ति और नजर घटती है। नींद कम आती है और चित्त विभ्रम पैदा होने लगता है।

हमारा शरीर एक बैटरी की तरह है। पावर के बिना बैटरी से प्रकाश नहीं आ सकता। मानव शरीर को ऐसी पावर आराम और पोषण से मिलती है। शक्ति क्षय होने से थकावट आती है। वैसे समय पोषण और आराम पाना आवश्यक होता है किन्तु इस युग में थकावट मिटाने के लिए लोग चाय पीते हैं, बीड़ी, सिगरेट सुलगाते हैं या नशा लेते हैं। इससे लाभ होने के स्थान पर हानि होती है।

चाय आदि पीने से थकावट के समय उत्तेजना आ जाती है। किन्तु चाय चाबुक मारकर घोड़े को भगाने के समान है। चाबुक लगने से घोड़ा भागने लगता है। किन्तु चाबुक की मार से घोड़े के शरीर में नयी शक्ति नहीं पहुँचती। वह केवल भय और पीड़ा से अपनी संचित शक्ति में से अधिक खर्च करके दौड़ने लगता है। चाय, काफी आदि उत्तेजक पेय भी मानव शरीर में यही चाबुक-मार का सा ही काम करते हैं।

चाय आदी बना देती है—कैफीन का असर धीरे-धीरे फैलता है। चाय पीने वाले को बिना चाय पिये चैन नहीं पड़ती। बिना चाय पिये उसे सुस्ती और परेशानी सताती हैं। चाय पीने पर उत्तेजना बढ़ती है, किन्तु यह उत्तेजना हृदय और लीवर की मांसपेशियों को शिथिल बनाये चलती है। कुछ समय पश्चात् इससे बदहजमी, पेट में वायु विकार तथा दिल के दर्द आदि की बीमारी हो जाती है। कभी-कभी मूर्छा भी आने लगती है। रक्तचाप वाले यदि चाय पीना बन्द कर दें, तो केवल इसी से रक्त का दबाव ३०-४० पाइंट घट जाता है।

कैफीन है क्या ?—कैफीन मूत्राम्ल-यूरिक एसिड के जैसे गुणधर्मो वाला अम्लक्षार वायु तत्त्व है। इससे रक्त में अम्लता बढ़ती है, फलतः मूत्राशय का काम बढ़ जाता है और हृदय, लीवर व दूसरे अन्य अवयवों की रक्त वाहिनियों में अम्लदोषज विकृति आ जाती है। चाय पीने के बाद पेशाब अधिक आता है और उसमें मूत्राम्ल—यूरिक एसिड का अंश अधिक होता है।

शरीर में पैदा होने वाले या बाहर से शरीर में आने वाल जहरों को संग्रह करने में लीवर महत्त्वपूर्ण कार्य करता है। किन्तु मूत्राम्ल—यूरिक-एसिड के संग्रह करने का सामर्थ्य लीवर में नहीं होता। इसी से चाय पीने वाले को बार-बार पेशाब होता है। बहुमूत्र का रोग भी अधिकांशतः हो जाता है। □

(पृष्ठ १२ का शेष)

"सं प्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतम्।"

"एक दूसरे में रुचि रख कर,
प्रेम मग्न हम सदा रहें।
वाणी हो बलवती सत्य मय,
दृष्टि हमारी विशद रहे।
सौ वर्षों तक सुनें हमारी—
सभी इन्द्रियाँ विमल रहें
स्वयं शक्त हों, साथी जन की,
सेवा का सामर्थ्य रहे।" ○

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—राजेन्द्र प्रसाद

वैज्ञानिक वार्ता

(१) कोयले व अन्य कई प्रकार के खनिज पदार्थों की खानों में काम करने वालों के लिए एक नई प्रकार की 'हेलमेट' (टोपी) का आविष्कार हुआ है, इसमें एक छोटा सा पंखा लगा रहने से गन्दी-मैली हवा एक फिल्टर में गुजर कर बाहर फेंकी जाती है और साफ एवं स्वच्छ हवा ही कार्य करने वाले के चेहरे के पास रह पाती है।

(२) एक ऐसे हल्के व हाथ से उठाये जाने वाले यंत्र का निर्माण हुआ है जिससे कि दीवारों की, चादरों की, पाइपों इत्यादि की मोटाई आसानी से ज्ञात की जा सकती है, यह यन्त्र बैटरी से चलता है और अलट्रासोनिक के सिद्धान्तों पर निर्धारित है। इस यन्त्र को प्रयोग करने के लिए वस्तु का कोई भाग काटने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस यन्त्र के साथ दो ऐसी निश्चित मोटाई की वस्तुएँ भी दी जाती हैं जिनसे कि अन्य वस्तुओं की मोटाई की सम्बन्धित मात्रा यन्त्र में सीधी पढ़ी जा सके।

(३) डिस्टोलोक कम्पनी (इंगलैंड) ने एक ऐसी पद्धति का निर्माण किया है, जिससे कि दूर से बैठे-बैठे अस्पतालों, दफ्तरों, स्कूलों इत्यादि के दरवाजे अपने आप तालों से बन्द किये जा सकते हैं और उसी प्रकार अपनी इच्छा के अनुसार खोला जा सकता है। इन तालों को क्रिया में लाने के लिए एक ही कर्मचारी रहता है जो कि एक ऐसे प्रकोष्ठ में बैठता है जहाँ से वह बाहर का प्रत्येक दरवाजा देख पाता है और पहिले से निश्चित किये नियम प्रयोग में लाता है। ये ताले एक प्रकार की मोटर से काम करते हैं और इन्हें साधारण बिजली के अतिरिक्त किसी और प्रकार की ऊर्जा की आवश्यकता नहीं पड़ती।

(४) कैंसर को और भली प्रकार परीक्षण करने के लिए इस्राईल में एक नई प्रकार का यन्त्र बनेगा जिससे कि तीनों दिशा का एक्स-रे-चित्र मिल पायेगा। यह यंत्र अलट्रासोनिक के सिद्धान्तों पर निर्धारित है, इससे छाती के कैंसर का शीघ्रता और अधिक सूक्ष्मता से ज्ञान हो पायेगा। यह साधारण एक्स-रे यन्त्रों से कुछ अलग ही होगा जिनमें कि भिन्न प्रकार के मांस-पेशियों की तहों को पहिचानने की क्षमता नहीं होती। पर इस यन्त्र में एक भिन्न प्रकार की तरंगें उत्पन्न होंगी जो कि शरीर के इच्छित भागों से टकरा कर उनके तल-रूप-ज्ञान को एक चित्र में प्रस्तुत करेंगी और क्योंकि इनसे तीन दिशा की दशा मिल पायेगी वस्तुतः एक से अधिक एक्स-रे लेने की आवश्यकता न रहेगी।

(५) केन्द्रीय जल एवं ऊर्जा केन्द्र, पूना ने एक ऐसे यंत्र का निर्माण किया है जिससे दूर बैठे-बैठे पानी के तल का माप मालूम होता रहता है, यह यन्त्र साधारण बिजली की सप्लाई से चलता है और घरों में, कालेजों में, जल सम्बन्धी विभिन्न केन्द्रों में प्रयोग हो पायेगा। यह यंत्र दो सलाखों के बीच की 'रुकावट' के परिवर्तन पर निर्धारित है।

(६) जर्मनी की एक कम्पनी ने एक ऐसी मशीन का निर्माण किया है जिससे कि ऐस्फाल्ट सड़कों का काटना बहुत ही आसान हो गया है। इस मशीन में लगे 'कटर ब्लाक' से ३००-४०० वर्ग मीटर प्रति घन्टे की गति से ४ सेन्टीमीटर तक की सड़क काटी जा सकती है। यह कार्य प्रायः मरम्मत के दिनों में होता रहता है।

(७) जापान की एक कम्पनी 'कीकई शिन्को क्यो-काई' ने एक ऐसी पूर्ण पद्धति का निर्माण किया है जिसमें कि पेड़ों से काटकर लाई हुई लकड़ी अपने आप कटती है (उनकी मोटाई, लम्बाई इत्यादि पहिले से ही निश्चित कर दी जाती है), अपने आप भिन्न-भिन्न मापों के टुकड़े भिन्न-भिन्न स्थानों पर जाकर ढेरों में लग जाते हैं। इस सारी मशीन को काबू में रखने के लिए एक विशेष प्रकार का कम्प्यूटर भी निश्चित रहता है।

(८) रूस की 'छूया' घाटी में लगे एक नये यंत्र से दूर पर ही बैठे यह सब जानकारी प्राप्त होती रहती है कि दस किलोमीटर के भीतर खेतों में किस दर पर पानी जा रहा है, नहरों में पानी का क्या तल है और जल के प्रवाह को रोकने के लिए विभिन्न दरवाजों की क्या दशा है। इससे कार्य में अत्यन्त व्यस्त नियन्त्रणकर्त्ताओं को बहुत सहायता मिलती है कि वे वर्तमान एवं भविष्य की दशा ज्ञात कर पाएँ।

(९) माचिस के बराबर माप का एक नया यंत्र मच्छरों को भगाने में मदद कर रहा है। इसका प्रभाव ३-५ मीटर तक रहता है। इसमें नौ वोल्ट की छोटी बैटरी पड़ती है जो कि लगभग एक सौ घण्टे तक चल पाती है। यन्त्र का मूल्य १०० रु० से अधिक न होगा। ◆

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

निर्भयता-संकल्प-धारण

—श्री पं० शिवदयालु जी

संसार में पूर्ण निभय बनकर विचरना ; अन्याय, अत्याचार के सामने कभी शीश न झुकाना; पाप दुराचार से कभी समझौता न करना, अधर्म और दुष्टजनों का कभी साथ न देना, यह मानव तब ही कर सकता है जब वह अपना जीवन पूर्ण निर्भयता के साथ व्यतीत करे। सर्वत्र निर्भयता का साम्राज्य विस्तृत हो, इस सद्भावना से निम्न १२ आहुतियां गम्भीरतापूर्वक देनी चाहिएं।

ओ३म् अभयं नः करत्यन्तरिक्षं स्वाहा ॥१॥

बिजली वर्षा ओले कर्त्तव्य-पथ से हमें विचलित करने वाले न हों। हम पूर्ण निर्भय बनकर गति करने वाले हों।

ओ३म् अभयं न इमे द्यावापृथिवी स्वाहा ॥२॥

उक्ता माता गर्मी और शीत, वन पर्वत सरिता और सागर हमारी प्रगति में बाधक न हों।

ओ३म् अभयं नः पश्चादस्तु स्वाहा ॥३॥

हमारा भूतकाल सदा उज्ज्वल और महान् हो। कभी हमारी प्रगति में वह भय उत्पन्न करने वाला न होकर सदा सहायक ही हो।

ओ३म् अभयं नः पुरस्तादस्तु स्वाहा ॥४॥

हमारा भविष्य भी उज्ज्वल और महान् हो, उसकी कल्पना भी कभी हमें भयभीत न कर सके।

ओ३म् अभयं नोऽधरादस्तु स्वाहा ॥५॥

हमारी संरक्षकता एवं आधीनता में निवास करने वाले तथा कार्य करने वाले प्राणियों से कभी हमें भय प्राप्त न हो।

ओ३म् अभयं नो मित्रादस्तु स्वाहा ॥६॥

हमारा आचरण ऐसा हो कि हमसे हित रखने वाले, प्रेम रखने वाले प्राणी सदा प्रसन्नता लाभ करें, जिससे हमें कभी उनसे कोई भय प्राप्त न हो।

ओ३म् अभयं नोऽमित्रादस्तु स्वाहा ॥७॥

हम अपने शत्रुओं से कभी असावधान न रहें। उनका दलन, मर्दन एवं नियमन करने में सदा प्रयत्नशील हों, और वह कभी भी हमारे लिए भयकारक न बन सकें।

ओ३म् अभयं नो ज्ञातादस्तु स्वाहा ॥८॥

यह सारा विश्व जो हमारी आंखों के सामने घूमता है, कभी भी हमारे लिए भय का कारण न बनें।

ओ३म् अभयं नः परोक्षादस्तु स्वाहा ॥९॥

यह सारा संसार जो नेत्रों से ओझल है अर्थात् यह सूक्ष्म विश्व भी कभी हमें भयभीत करने वाला न हो।

ओ३म् अभयं नो नक्तमस्तु स्वाहा ॥१०॥

हम सुख की नींद सोवें, खोटे स्वप्न भूत प्रेत चोर आदि का भय कभी हमें सताने वाला न हो। हमारी रजनियां भोग विलास में बीतने वाली भी न हों। अपितु हमारी निशाएँ दैवी साधना की साधिका हों।

ओ३म् अभयं नो दिवास्तु स्वाहा ॥११॥

हमारा जीवन एक-एक क्षण श्रेष्ठतम कर्मों के अनुष्ठान में व्यतीत हो। हमारा चरित्र ऐसा शुद्ध और पवित्र हो कि दिन का एक क्षण भी कभी हमें भय, शंका, लज्जा से युक्त न कर सके।

ओ३म् अभयं सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु स्वाहा ॥१२॥

हम काल्पनिक संसार में विचरण न करके वास्तविक विश्व में दृढ़तापूर्वक गति करने वाले हों। हमारी आशाएँ कभी झूठी न हों, और इस हेतु कभी हमें दुःख आपत्ति के भय से त्रस्त करने वाली भी न हों। विश्व के किसी भी कोने से कभी हमें भय न सता सके। हम सत्य धर्म को धारण कर दृढ़ता से प्रगति करने वाले हों। हम विवेकशील बनकर शत्रु का मर्दन और मित्र का मान करने वाले बनें। हम स्थूल एवं सूक्ष्म विश्व की शक्तियों का प्रबोधन करने वाले हों। ✱

आर्यसमाज शताब्दी पर दयानन्द संस्थान का

अनुपम उपहार

वन्दना के स्वर

(सम्पादक श्री क्षेमचन्द्र 'सुमन')

हिन्दी साहित्य के प्रायः सभी मूर्धन्य कवियों द्वारा महर्षि दयानन्द पर लिखी कविताओं का अनुपम संग्रह।

बड़ा साइज : बढ़िया कागज

पृष्ठ लगभग २५० : मूल्य ८)

डिलक्स लाइब्रेरी संस्करण : १५)

आज ही आदेश भेजें

दयानन्द-संस्थान

नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पथिक से !

श्री मथुराप्रसाद 'मानव'

हे पथिक ! चलो युग बीत गया बैठे बैठे रोना रोते।
क्या भाव लिए हो मौन कहो, गरिमामय वीणा-मधु खोते ॥

बैठे इस रोना रोने से मंजिल होगी आसान नहीं।
रोना-रोना जगतीतल में सुख का सचमुच आह्वान नहीं ॥
मिथ्या हैं ये मधु के प्याले, अच्छा है इनसे विष पीना।
तुझको अपनी नौका खेनी, तुझको अपने बल पर जीना ॥
क्या हार गया पंथी ! पथ पर पल भर पीड़ा ढोते-ढोते।
हे पथिक ! चलो युग बीत गया बैठे-बैठे रोना रोते ॥

जलते हैं जग में दीप सदा, झंझाएँ भी चलती रहती।
नभ उपल वृष्टि करता भू पर फिर भी खेती फलती रहती ॥
चलने वाले पल भी न रुके, पवि की भीषण बरसातों से।
पाषाण तोड़ डाले कितने निर्झर ने निर्मम हाथों से ॥
केवल तुझको ही देखा है, पथ पर यों चेतनता खोते।
हे पथिक ! चलो युग बीत गया बैठे-बैठे रोना रोते ॥

कैसा तेरा गतिमय उर है, उठती है जिसमें हूक यहां।
कर सकती है जब एक बूंद, हिमगिरि के सौ-सौ टूक यहाँ ॥
क्यों शोषक दल की छाती में, यह भाले भोंक नहीं देता ?
कुम्भज बनकर परवशता का सागर क्यों सोख नहीं लेता ?
तिल-तिल भी यदि चलते रहते तो हम सुमेरु सर पर होते।
हे पथिक ! चलो युग बीत गया, बैठे-बैठे रोना रोते ॥

अपनी पर आ अड़ते देखे, मैंने शृगाल वनराजों से।
पथ छोड़ दिया पंथी ! तू ने भावी भय के अन्दाजों से ॥
लड़ने का व्रतधारी सैनिक, उपहार हार में पाता है।
जिसको निर्मल जल पीना है वह बीच धार में पाता है ॥
तुम तो तट पर ही खाते हो, बैठे-बैठे गहरे गोते।
हे पथिक ! चलो युग बीत गया बैठे-बैठे रोना रोते ॥

इस जलती हुई जवानी पर जड़ता की कैसी छाप यहाँ ?
भर दे रे, उनमें नवजीवन, जीवन जिनको अभिशाप यहाँ।
सागर पर सेतु बांधकर क्या युग धारा मोड़ नहीं सकता ?
पाषाण तोड़ने वाला हो, हथकड़ियाँ तोड़ नहीं सकता ?
कर दे तू पल में परिवर्तन, होनी होती होते-होते।
हे पथिक ! चलो युग बीत गया बैठे-बैठे रोना रोते ॥

卐

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—पं० वीरसेन वेदश्रमी

यज्ञ द्वारा ऋतु सुधार

(WEATHER MODIFICATION)

वेद के विज्ञान से आज का विज्ञान कितना पीछे है
यह इस लेख को पढ़कर स्पष्ट हो जाएगा —सम्पादक

□□□

सूर्य से ऋतुओं का निर्माण

भूमण्डल का जीवन ऋतुओं से प्रभावित है। ऋतु निर्माण में मुख्य प्रभाव शीत और ताप का पड़ता है। शीत और ताप के जनक चन्द्र और सूर्य हैं। परन्तु इन दोनों में सूर्य ही मुख्य है। सूर्य के ताप की वृद्धि और क्षय से ही दिन और रात्रि के तापमान में वृद्धि और क्षय होता है। ताप के ही वृद्धि और क्षय का वायुमण्डल पर प्रभाव पड़ने से वायु की विविध गतियाँ होती हैं। विभिन्न ताप-क्रमों के ही कारण अनेक स्तरों में वायु विभक्त भी होती रहती है। इसलिये वेद में 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च'—(यजुर्वेद ७।४२) कहा है। अर्थात् सूर्य ही जड़ एवं चेतन जगत् का आत्मा है। यही समस्त जगत् का जीवनदाता है।

यज्ञ, ऋतु को प्रभावित करता है

ऋतुओं के प्रतिकूल या अनैच्छिक प्रभावों से बचने के लिये प्रत्येक प्राणी स्वाभाविक रूप से प्रयत्न करता ही है। परन्तु क्या मनुष्यों के प्रयत्न से ऋतु में ऐच्छिक परिवर्तन या सुधार भी हो सकते हैं? इस जटिल प्रश्न का समाधान वेद सुगमता से निम्न शब्दों से दे रहा है:—ऋतुभ्यः स्वाहा, आर्तवेभ्यः स्वाहा —(यजुः २२।२८) अर्थात् ऋतुओं में इच्छित प्रभाव उत्पन्न करने के लिये यज्ञ किया करें तथा ऋतुओं से उत्पन्न प्रभावविशेषों के संरक्षण, वर्धन या निवारण करने के लिये भी यज्ञ किया करें।

यज्ञ से दैनिक जीवन में सुख की उत्पत्ति

इस प्रकार ऋतुओं एवं उनसे उत्पन्न प्रभाव-विशेषों को समर्थ बनाने या उनके प्रतिकूल प्रभावों के निवारणार्थ यज्ञ अर्थात् अग्नि में पदार्थविशेषों को विज्ञानपूर्वक होमने से प्राणिमात्र का लाभ होता है, अन्न की समुचित उत्पत्ति होती है। वर्षा समय पर एवं सन्तुलित होती है। अवर्षण, अतिवृष्टि आदि की स्थिति नष्ट होती है। वायु, शीत, ताप आदि का ऋतु की स्थिति के अनुसार समुचित व्यवहार प्रकृति में प्रभावित होता है जिससे दैनिक जीवन सुखी बनता है। वेद ने इसीलिये कहा—सुदिनं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम्—(यजुः १८।६) अर्थात् शुभ दिवसों का सम्पादन यज्ञ के द्वारा समर्थ होता है।

यज्ञ, विश्वभिषक् है

वास्तव में वैदिक यज्ञ ऋतुओं को समर्थ बनाते हैं। यज्ञ द्वारा उनमें सृष्टि विज्ञान के अनुसार ही प्रतिकूलताओं का निवारण और अनुकूलताओं का प्राबल्य क्रियाशील होता है। अतः वैदिक यज्ञ विश्व भेषज् प्रक्रिया है। इसका भिषक् अग्नि ही है। अग्नि में आहुति रूप में पड़े हुए वायु दोषनाशक, रोगनाशक, पुष्टिकारक, जीवनदायक तथा परिवर्तनकारक द्रव्यों की गन्ध तथा धूम्र सूक्ष्म होकर विशाल वायुमण्डल में व्याप्त हो जाती है और उसके प्रभाव द्वारा ऋतु में सुधार उत्पन्न होता है।

यज्ञ का ऋतुओं में विस्तार एवं रक्षण

यज्ञ द्वारा जब ऋतुओं को प्रभावित किया जाता है तो उन हव्य पदार्थों का वायुमण्डल में विस्तार सृष्टि की ऋतुविज्ञान प्रक्रिया से स्वभावतः होता जाता है और संरक्षण भी। वेद के निम्न मन्त्र में इस बात को स्पष्ट किया है—ऋतवस्ते यज्ञं वितन्वन्तु मासा रक्षन्तु ते हविः। संवत्सरस्ते यज्ञं दधातु नः प्रजां च परिपातु नः (यजुः २६।१४)—अर्थात् जो यज्ञ, विद्वान्–वैज्ञानिकों द्वारा किया जाता है उसको वसन्त, ग्रीष्मादि ऋतु की प्राकृतिक ताप, वात, गति आदि की स्थितियां विस्तृत करें। उस यज्ञ में जिन पदार्थों की ऋतु अनुकूल आहुति दी गई है वह प्राकृतिक शक्तियों से विस्तार को प्राप्त हो और जिन महीनों की सामर्थ्य के प्रभाव से वे ऋतुएं बनी हैं वे महीने भी स्व-सामर्थ्य से उसको धारण करें अर्थात् आहुति की शक्ति की रक्षा करें—नष्ट न करें। उस यज्ञ को समस्त ऋतुओं से बना जो वर्ष है वह धारण व पुष्ट करे। ऐसे प्रयत्न से जो ऋतुओं में शुभ या अनुकूल परिवर्तन के लिये किया गया यज्ञ है वह समस्त प्रजा की सब ओर से रक्षा करता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महीनों का निर्माता सूर्य है

यहां यह भी स्मरण रखना आवश्यक है कि महीनों का निर्माण एवं अस्तित्व नाम मात्र से ही नहीं है अपितु इनका सम्बन्ध आदित्य अर्थात् सूर्य से है तथा इसका सम्बन्ध सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि के पृथिवीमण्डलस्थ प्रभाव से भी है। अतः वेद ने ऋतुओं एवं ऋतुजन्य प्रभावों को प्रभावित करने के लिये—नक्षत्रेभ्यः स्वाहा–मासेभ्यः स्वाहा–चन्द्राय स्वाहा–सूर्याय स्वाहा–रश्मिभ्यः स्वाहा–आदित्येभ्यः स्वाहा –मरुद्भ्यः स्वाहा– (यजुः २२।२८) आदि वाक्यों द्वारा नक्षत्र, मास, चन्द्र, सूर्य, रश्मियां, १२ आदित्य, ४९ मरुद्गणों के लिये भी आहुति का उपदेश दिया।

धामच्छद्–अग्नि

उक्त सब नामों के धाम या स्थानों को स्व प्रभाव से आच्छादित करने की सामर्थ्य यज्ञाग्नि में की गई यज्ञ-प्रक्रिया में है। इसे वेद ने धामच्छदग्निः (यजुः १८-७६) अर्थात् अग्नि धामच्छद है–कहा है। जो सब स्थानों में प्रविष्ट होने वाला तथा सबका आच्छादन कर लेता है वह धामच्छद कहलाता है। अतः यज्ञ में जो आहुतियां दी जाती हैं वे पृथिवी, वायुमण्डल, ऋतुप्रभाव क्षेत्र तथा उससे भी ऊपर के स्थानों में पहुंचकर वहाँ के तत्त्वों को प्रभावित एवं विशेष क्रियाशील कर देती हैं, यह ज्ञात होता है। इसी मन्त्र में जहां अग्नि को धामच्छद कहा है वहां साथ ही आगे इन्द्र अर्थात् विद्युत् को तथा वाणी अर्थात् शब्द को भी धामच्छद कहा है। अर्थात् ये भी सर्वत्र व्याप्त एवं गति करके सबका विविध प्रकार से आच्छादन करते हैं। इसलिये यज्ञ द्वारा इन्द्र शक्ति को (विद्युत् को) भी क्रियाशील किया जाता है और उसमें मन्त्रोच्चारण द्वारा वाक् शक्ति का प्रयोग होता है। इन तीनों के प्रभाव से यज्ञ सम्पन्न होता है।

यज्ञ के लिये प्रमुख आहुति द्रव्य

यज्ञ में आहुति के पदार्थों का संक्षेप में मूल रूप से उल्लेख अनेक स्थानों पर आता है। हम यहां एक मन्त्रांश प्रस्तुत कर रहे हैं–जुषाणो अग्निर्भेषजं पयः सोमः परिसृता घृतं मधु व्यन्त्वाज्यस्य होतर्यज–(यजुः २१।४०)। इसका तात्पर्य यह है कि यज्ञ में हवि रूप से प्रयुक्त औषधियों को सेवन अर्थात् आत्मसात् करता हुआ अग्नि चारों ओर से आहुति रूप में प्राप्त हुए औषधियों के रसों के साथ, दूध, औषधियों के समूह, घृत और मधु को प्राप्त हो तथा उनके साथ आहुति देने वाले जो व्यक्ति हों वे घृत का होम करें। कतिपय मन्त्रों में यव, गेहूं, भात, सुगन्धित द्रव्य, वे सब औषधियां जिनको गौ आदि पशु चरती हैं उनका भी प्रयोग यज्ञ में करने का उल्लेख है।

ऋतु अनुसार यज्ञ

ऋतु-अनुसार यज्ञ करने के लिये वेद निम्न शब्दों में उपदेश देता है—वयं देवा नो यज्ञमृतुथा नयन्तु। (यजुः २६।१९) अर्थात् ऋतु यज्ञों के विज्ञान के जानने वाले विद्वान् हमारे यज्ञ को ऋतु के अनुसार संचालित करें। ऋतु अनुसार यज्ञ करने के लिये हविद्रव्यों को मुख्यतः कतिपय श्रेणियों में विभक्त करना होगा। प्रत्येक ऋतु के अनुसार हवि पदार्थ और ऋतुजन्य प्रभावों के जनक एवं शामक पदार्थों का वर्गीकरण करना होगा। यथा–शीतजनक तथा शीत रोधक, ताप जनक तथा ताप रोधक, वर्षाजनक तथा वर्षारोधक, वायुजनक, तथा वायुरोधक, रोगनाशक, वायुशोधक, पुष्टिकारक, जीवनप्रद आदि। इस प्रकार ऋतुयज्ञों का संचालन करने के लिए ऋतु की पुष्टि के लिये अनुकूल पदार्थों की यज्ञाग्नि में हवि देनी चाहिये और ऋतु की प्रतिकूलताओं के निवारणार्थ प्रभावजनक पदार्थों की यज्ञाग्नि में आहुति देने से ऋतुओं में इच्छित सुधार किया जा सकता है।

ऋतु अनुसार यज्ञों का लाभ

इस प्रकार यज्ञों को करने से विशेष लाभ क्या होता है? —इसका उत्तर वेद मन्त्र निम्न प्रकार दे रहा है—अमुत्रभूयादध यद्यमस्य बृहस्पते अभिशस्तेरमुंचः। प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्मात् देवानामग्ने भिषजा शचीभिः॥ (यजुः २७।९)–अर्थात् हे बृहस्पते! समस्त वाक् के स्वामी एवं सब लोकों के रक्षक यज्ञ विज्ञान के ज्ञाता–परम वैज्ञानिक, आप भविष्य में होने वाले कष्ट जो प्राकृतिक कारणों से ऋतुओं में होते हैं, उनसे छुड़ाइये और जो प्राकृतिक नियम ग्रीष्म, शीत, वर्षा, वायु आदि के इस प्रकृति में कार्य करते हुए मृत्यु आदि कारणों को लू, शीत लहर, अनावृष्टि, बाढ़, सूखा, आंधी, तूफान आदि के कारण उपस्थित करते हैं उनसे भी आप हमें बचाइये। यह यज्ञ की अग्नि जैसे अपने ताप से वायुमण्डल में रोग निवारक सामर्थ्य एवं जीवन सामर्थ्य सिद्ध करती है वैसे इस देवयज्ञ की प्रक्रिया से आरोग्य की सिद्धि करें। अर्थात् पदार्थों के गुण धर्म को जानकर यज्ञ में उनका प्रयोग करने से हम कष्टदायक ऋतु प्रभावों को दूर कर सकते हैं और अनुकूल प्रभावों को ऋतु में प्रविष्ट कर ऋतु में सुधार भी कर सकते हैं।

सर्वसामान्य को वायुमण्डल में प्रसारित द्रव्यों के प्रभाव की अनुभूति

(१) यदि किसी स्थान पर अग्नि में लाल मिर्च डाल दी जावे तो वहां के वायुमण्डल में उसकी गन्ध तत्काल फैल कर छींकों को उत्पन्न कर देती है।

(२) यदि थोड़ी सी धूप या अगरबत्ती जलाई जाती है तो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वहां का वायुमण्डल सुगन्धित होता है और चित्त शान्त एवं प्रफुल्लित होता है।

(३) यदि टीयर गैस छोड़ी जाती है तो अश्रु उत्पन्न करती है और श्वास-प्रश्वास में बाधा उत्पन्न होती है।

(४) यदि लाफिंग गैस कोई सूंघता है तो उसे हँसी आती है।

(५) थोड़ी सी हींग का छौंक दाल को सुगन्धित तो करता ही है परन्तु वायुमण्डल में उसका प्रभाव तत्काल सभी को प्रतीत होता है।

उपरोक्त परिणामों से ज्ञात होता है कि थोड़े से पदार्थ को यदि अग्नि द्वारा सूक्ष्म कर द तो उसका प्रभाव वायुमण्डल पर होता है। यज्ञ द्वारा यही प्रक्रिया विशेष प्रभावशाली रूप में होती है। वायुमण्डल को प्रभावित करना ही ऋतुओं को प्रभावित करना है।

वायुमण्डल के दूषित होने से ऋतुओं की सामर्थ्यहीनता

वायुमण्डल के अनेक प्रकार से दूषित होने का ही कुप्रभाव अवर्षण, अतिवर्षण, तूफान, रोग, विनाश, अन्नाभाव, दूषित अन्न, दूषित जल, स्वादहीन अन्नादि की उत्पत्ति, प्राणवायु की न्यूनता आदि के रूप में उपस्थित होते हैं। अर्थात् ऋतु में सामर्थ्यहीनता उत्पन्न होती है और उसके परिणाम हमारे लिये अनेक प्रकार से अनिष्टकारक होने लगते हैं।

घृत द्वारा ऋतुओं में सामर्थ्य एवं सुधार

ऋतुओं की सामर्थ्यहीनता में सुधार उत्पन्न करने तथा उनको समर्थ एवं पुष्ट करने के लिये सुगम उपाय यज्ञ ही है। इस कार्य में गौ घृत की आहुति का प्रभाव ही सर्वाधिक प्रमुख है। गौ घृत के होम करने से ज्योतिर्मय अणु व्याप्त हो जाते हैं और वे अन्तरिक्ष में व्याप्त अशुद्धि, प्रदूषण, हानिकारक तथा विषाक्त तत्त्वों को नष्ट कर देते हैं। इसका प्रभाव अन्तरिक्ष के उच्चतम क्षेत्र पर और उससे भी ऊपर के क्षेत्र में होता है।

घृत की विषनाशन में सर्वसामान्य की अनुभूति

हमारे भारत देश में सर्वसामान्य रूप से व्यवहार प्रचलित है कि यदि किसी व्यक्ति को सांप काट ले अथवा कोई विष खा ले तो उसको घृत पिलाया जाता है जिससे उस व्यक्ति से विष का प्रभाव नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार विषाक्त वायुमण्डल को निर्विष करने के लिये उसे भी घी पिलाना चाहिये। वेद ने कहा है—घृतेन द्यावापृथिवी पूर्येथाम्—(यजुः ५।२८) अर्थात् द्युलोक और पृथिवीलोक तथा उसके मध्य के भाग को घृत से पूर्ण कर देना चाहिये। यह कार्य यज्ञ के द्वारा ही संभव है। वेद ने कहा है कि—स्वाहाकृते ऊर्ध्वनभसं मारुतं गच्छतम्—(यजुः ६।१६) अर्थात् जब यज्ञ में स्वाहा शब्द के साथ आहुति की क्रिया होती है तो आकाश में ऊर्ध्वगति करने करने वाली वायु गति करती है। इस प्रकार घृत की आहुति से समस्त वायुमण्डल व्याप्त होकर निर्विष हो जाता है और पुष्ट भी होता है। इसलिये वैदिक यज्ञों में प्रधान आहुति द्रव्य गौ घृत ही है। इसका प्रभाव सर्वाधिक क्षेत्र पर व्याप्त होता है और इसी के साहचर्य से अन्य द्रव्यों का प्रभाव भी वृद्धि प्राप्त करता है।

घृताहुति का वरुण मण्डल पर प्रभाव

जब यज्ञ होता है तो वायुमण्डल के प्रधान रूप से प्रभावित होने से उसका प्रभाव वायुमण्डलस्थ जलों, जिनसे मेघ बनते हैं, पर भी विशेष पड़ता है। वायुमण्डल के ही प्रभाव से वृक्ष, वनस्पति, अन्नों में तथा उसके अन्दर के रसों पर भी प्रभाव पड़ता है और पृथिवीस्थ जल जो नदी, तालाब और समुद्र में हैं उन पर भी प्रभाव पड़ता है। यज्ञ की आहुति से इस प्रकार यह सब वरुणमण्डल शुद्ध हो जाता है और आरोग्यता प्रदान करने वालों में अग्रणी हो जाता है। इसलिये वेद ने कहा—वरुणं भिषजां पतिं स्वाहा—(यजुः २१।४०)। अर्थात् वरुण तत्त्व जो जल तत्त्व के निर्माण का मूलरूप से सूक्ष्म प्रधान तत्त्व है वह चिकित्सकों का स्वामी है। उसके लिये आहुति यज्ञ में प्रदान करनी चाहिये। यज्ञ से प्रभावित वरुण मण्डल के द्वारा दूध, मधु, ओषधियां, उनके रस में भी आरोग्य का संचार हो जाता है। वृष्टि जल भी केवल परिष्कृत जल (डिस्टिल्ड वाटर) न रह कर औषधिमय हो जाता है। इस प्रकार दूसरा परिवर्तन ऋतुओं पर यज्ञ द्वारा वरुणमण्डल के माध्यम से होता है।

घृत एवं घृतयुक्त पदार्थों की आहुति से सोममण्डल का निर्माण

सोम तत्त्व से आदित्य, सूर्य, सूर्य रश्मियां, चन्द्रमा, नक्षत्र, वृक्ष, वनस्पति, पर्वत, पृथिवी, वायु, प्राण, जल, मेघ, विद्युत् आदि सभी तत्त्वों को जीवन प्राप्त होता है। जीवन ही नहीं उनमें परिपूर्णता से मस्ती, आनन्द, माधुर्य प्रकट होने लगता है। प्रकृति में नवजीवन, नवयौवन प्रसारित होने लगता है। ऐसे अद्भुत गुणयुक्त सोम के मण्डल का निर्माण यज्ञ द्वारा तब होता है जब दूध, मधु, ओषधियों के रस, विविध ओषधियों को घृत मिश्रित करके आहुतियां दी जाती हैं और इसके अतिरिक्त भी घृत की पृथक् रूप से आहुतियां दी जाती हैं। इस प्रकार सोम मण्डल के निर्माण से ऋतुओं का कार्य सामर्थ्ययुक्त हो जाता है। वायुमण्डल, वरुणमण्डल, विद्युन्मण्डल सभी शुद्ध, आरोग्य, जीवनदाता बन जाते हैं।

घृताहुति से तेजोमण्डल का निर्माण

यज्ञ में घृताहुति के आधिक्य से तेज की विशेष वृद्धि होती है जिससे यज्ञ के द्वारा प्रभावित वायु, जल, अग्नि के अणुओं में ताप, तेज आदि की वृद्धि होती है और गति में भी विशेष वृद्धि होकर शक्ति की वृद्धि होती है। वायुमण्डल तथा वरुणमण्डल के अणुओं में तेजोमण्डल व्याप्त होने लगता है। जिस प्रकार से आतिशी शीशे के माध्यम से सूर्य रश्मियों को एक केन्द्र में प्रक्षिप्त करने से स्थान-विशेष पर तापाधिक्य हो जाता है उसी प्रकार तेजोमण्डल के अणु अपने में सौर तेज को धारण करने लगते हैं। विद्युत् के परमाणुओं में ऊर्जा का संभरण होने लगता है। इस सब को यज्ञाग्नि अपने में भी धारण करने लगती है और उससे पुनः तेजोमण्डल में घर्म का संचार होता है। वेद ने—सूर्यस्य भानुं यज्ञो दाधार—(सामवेद १८४३) द्वारा यह रहस्य प्रकट किया है कि सूर्य की किरणों के तेज को यज्ञ धारण करता है तथा—मातरिश्वनो घर्मोसि—

(शेष पृष्ठ २६ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—नारायणदत्त वैद्य

वैदिक साम्यवाद

ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किंच जगत्यां जगत् ।
तेन त्येक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ॥१॥

(जगत्यां) विश्व ब्रह्माण्ड में (यत् किंच) जो कुछ है, वह (जगत्) निरन्तर गतिशील है। (इदं सर्वं) यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड (ईशावास्यं) ईश में बसा हुआ है?

(तेन) उस ईश द्वारा (त्यक्तेन) दिये हुए से (भुञ्जीथाः) भोग कर।

अथवा

(तेन) इस कारण (त्यक्तेन) त्याग भावना से (भुञ्जीथाः) भोग कर (मा गृधः) लालच मत कर। (कस्य स्वित् धनम्) यह धन किसका है।

जगती में, विश्व ब्रह्माण्ड में जो कुछ दृष्टिगोचर है अथवा जो दृष्टि से परे है, यह सब जगत् है, निरन्तर गतिशील है, चलायमान है। इसका आना जाना निरन्तर बना हुआ है।

सांख्य शास्त्र कहता है—'चल च गुणवृत्तम्' सत्त्व, रज, तम रूप प्रकृति चल है। प्रकृति का गुणवृत्त [स्वभाव] चल न हो तो जगत् का निर्माण ही नहीं हो सकता। सत्त्व, रज, तम के चल स्वभाव से ही प्रकृति से सृष्टि का निर्माण होता है। इनके चल स्वभाव से ही सृष्टि और प्रलय की क्रम परम्परा बनी हुई है।

इस जगत् में आनन्द का स्थायी अनुभव करना चाहो तो इस जगत् का उपभोग तो करो पर यह मान कर उपभोग करो कि सब भोग पदार्थ चल हैं, अचल नहीं। सदा एक रूप में भी तुम्हारे पास नहीं। प्रत्येक कण जो आज तुम्हारे पास है, वह कल नहीं रहेगा। जो पदार्थ तुम्हारे लिए सुखद है, वह कल दुःखद भी हो सकता है। उपभोग करो पर त्याग भावना से उपभोग करो। अपने परिश्रम से प्रभु के दिए हुए धन का त्याग भावना से उपभोग करो। यह समझ लो, जो आज तुम्हारे पास है वह कल छूट भी सकता है। संयोग के साथ वियोग जुड़ा हुआ है। एक पार्श्व संयोग है और दूसरा पार्श्व वियोग।

हे जीव! यह सर्वजगत् जिसका तू उपभोग कर रहा है, वह ईश में बसा हुआ है। ईश, जो तुझ पर शासन कर रहा है। ईश, जो तुझे शक्ति दे रहा है। ईश, जो तेरा स्वामी है।

इस तत्त्व को समझो। इस तत्त्व को समझते हुए जगत् के पदार्थों का त्याग भावना से उपभोग करो। छीनाझपटी मत करो। जिसका जो अधिकार है, वह उसके पास रहने दो। किसी का शोषण मत करो। प्रत्येक का पारिश्रमिक (परिश्रम की कमाई) उसके पास रहने दो। प्रत्येक प्राणी को उसके पारिश्रमिक का उपभोग करने दो। दूसरे के परिश्रम का धन उससे छीनने की इच्छा मत करो।

शारीरिक बल से, बुद्धि बल से, छल कपट से अथवा अर्थ के बल से किसी के परिश्रम की कमाई छीनना अपराध है। इस अपराध से भविष्य में मानसिक सन्ताप तो होगा ही, पर समाज में विनाशकारी क्रान्ति का भी प्रसार होगा।

यह धन किसका है ? न तेरा है न मेरा है। समस्त समाज का है, राष्ट्र का है, विश्व का है। ईश की देन है। यह विश्व ईश में बसा है, हम भी ईश में बसे हैं। भोग करो पर त्याग की भावना से भोग करो।

कर्ममय जीवन

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥२॥

(कर्माणि कुर्वन् एवं) कर्म करते हुए ही हे जीव (इह) इस लोक में (शतं समाः) सौ वर्ष (जिजीविषेत्) जीने की इच्छा कर। (एवं) इस प्रकार (त्वयि) तुझ में (कर्म न लिप्यते) कर्म का लेप नहीं होता। (इतः अन्यथा न अस्ति) इसके सिवाय कोई मार्ग नहीं, जिससे कर्म का लेप न हो।

प्रत्येक जीवधारी को चाहिए कि वह सौ वर्ष जीने की इच्छा करे। इस इच्छा के साथ निरन्तर कर्मशील बना रहे, जिससे अपने परिश्रम से कमाए हुए धन का उपभोग कर सके। दूसरे के परिश्रम को छीनकर संचित धन मेरा नहीं। उससे मुझे सुख नहीं मिल सकता। परिश्रम के बिना आलसी जीवन से भी मेरा कल्याण नहीं हो सकता। आलस्य मनुष्य का परम शत्रु है। आलस्य से शरीर और मन दोनों में विकार आ जाता है। शारीरिक परिश्रम के बिना अन्न हमारा नहीं हो सकता। वह शरीर निर्माण में सहायक न होगा, पर शरीर का शत्रु बनकर उसे रोगी बनाये रखेगा। आलसी मनुष्य का मन भी सदा विकारों से घिरा रहेगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवन पर्यन्त कर्मशील बने रहने से, निष्काम भाव से कर्मशील बने रहने से कर्म का लेप नहीं होता। एक बार निश्चित लक्ष्य पर न भी पहुँच सकोगे तो निराशा न होगी। कर्मशील जीवन बना रहेगा।

वैदिक पुरुषों का कर्मशील जीवनकाल सौ वर्ष था।

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
तांस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः ॥३॥

(ये के च) जो कोई (आत्महनः जनाः) स्वयं की हत्या करने वाले, आत्मघाती जन हैं (ते) वे (प्रेत्यापि) इस जन्म को छोड़कर दूसरे जन्म में भी (तान् लोकान्) उन लोकों की ओर (गच्छन्ति) जाते हैं, जो (असुर्या नाम) असुर्य नाम के हैं; (अन्धेन तमसा) घोर अन्धकार से (आवृताः) घिरे हुए हैं।

आत्महन—जो आत्मा को मारते हैं, स्वयं को मारते हैं। स्वयं परिश्रम करके जीवन का निर्माण करना जीवन है। दूसरे के परिश्रम को छीनकर उस धन का उपभोग आत्म हनन है, स्वयं को मृत्यु का ग्रास बनाना है। संसार के पदार्थों का उपभोग करो। उपभोग के लिए ही ईश ने सांसारिक पदार्थ बनाये हैं। इन पदार्थों को अपने परिश्रम से, प्रतिभा से प्राप्त करो। दूसरे के परिश्रम को छीन कर नहीं।

कर्म जीवन है। स्वयं कर्म करके उस कमाई का उपभोग ही जीवन मार्ग है। सुरलोक का मार्ग है।

अकर्म मृत्यु है। मृत शरीर कर्महीन बन जाता है। अकर्म—कर्म न करके, दूसरे के परिश्रम की कमाई छीन करके सांसारिक पदार्थों का उपभोग आत्म हनन मार्ग है। असुर लोक का मार्ग है।

कर्म जीवन है। कर्मशील पुरुष के सामने निराशा का अन्धकार नहीं है। प्रकाश ही प्रकाश है।

अकर्म आत्म हनन है। कर्महीन पुरुष के सामने इस जन्म में ही निराशा, अन्धकार छा जाता है। मरण के बाद आने वाले जन्म में घोर अन्धकार में रहना पड़ेगा। घोर अन्धकार, निराशा की पराकाष्ठा ही अकर्म का (आत्महनन) का परिणाम है।

इस जीवन के संस्कार दूसरे जन्म में भी साथ रहेंगे। इस जीवन में कर्महीन बन कर आत्म हनन मत करो।

कर्म हीन होकर संसार के पदार्थों का उपभोग आत्म हनन का मार्ग है। यदि इस प्रकार आत्म हनन करोगे तो इस शरीर को छोड़ने के बाद घोर अन्धकार से घिरे असुर्य लोक में जा पहुँचोगे।

ईश्वर का स्वरूप

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा
आप्नुवन् पूर्वमर्शत्।
तद् धावतोऽन्यानत्येति तिष्ठत्
तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति ॥४॥

ईश (एकं) एक है। (अनेजत्) अविचल होते हुए भी (मनसः जवीयः) मन से अधिक वेग वाला है। (देवः) देव (एनत्) इसे (न आप्नुवन्) नहीं पहुँच पाते। (पूर्वम् अर्शत्) यह पहले ही पहुँचा हुआ होता है। (तत्) वह ईश (तिष्ठत्) ठहरा हुआ ही (अन्यान् धावतः) अन्य दौड़ते हुओं को (अत्येति) पार कर जाता है। (तस्मिन्) उसी ईश में रहता हुआ (मातरिश्वा) माता के गर्भ में आने वाला जीव (अपः) कर्मों को (दधाति) धारण करता है।

हे जीव ! तू सदा ध्यान में रख कि वह ईश जिसमें सम्पूर्ण निरन्तर गतिमय विश्व जगत् समाया हुआ है, वह सर्वव्यापी है। सर्वव्यापी होने से अविचल होता हुआ भी ईश जहाँ भी तेरा मन जागृत या स्वप्न अवस्था में पहुँचता है, वहाँ पहले ही पहुँचा हुआ होता है। वह तेरे अन्दर भी है, बाहर भी है।

अग्नि, वायु, जल भौतिक देव हैं। इन्द्रियाँ शरीर में रहने वाले देव हैं। अग्नि, वायु, जल देवता यह न समझें कि उनकी गति अचिन्तनीय वेगवाली है। वे अपने अचिन्तनीय वेग से जहाँ भी पहुँच पाते हैं, वहाँ दिव्य ज्योतिमय ईश पहले ही पहुँचा हुआ होता है।

हमारी इन्द्रियां विश्व भ्रमण करती हुई जहां भी पहुँचती हैं, वहां ईश पहले ही पहुँचा हुआ होता है।

हे जीव ! तू उस सर्वव्यापी, सर्वत्र पहुँचे हुए ईश के अन्दर समाया हुआ कर्म करता है। अतः सावधान रह। वह ईश तेरे सब कर्मों को, सभी मानसिक भावनाओं को देख रहा है।

उस ईश ने, तेरे स्वामी ने कर्म करने में तुझे स्वतन्त्र बना रखा है, पर कर्मफल भोग में तू परतन्त्र है। उस ईश के आधीन है। जो करेगा वह भरेगा। (मा गृधः) तू लालच में पड़कर कुकर्म न कर।

तदेजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥५॥

(तत्) वह ईश (एजति) सर्वत्र पहुँचता है। (तत् न एजति) वह अविचल है। (तत्) वह ईश (दूरे) दूर है। (तत् उ अन्तिके) वह समीप भी है। (तत्) वह ईश (अस्य सर्वस्य अन्तः) इस सम्पूर्ण जगत् के अन्दर है। (तत् उ अस्य सर्वस्य बाह्यतः) वह इस सम्पूर्ण जगत् के बाहर भी है।

सर्वव्यापी ईश अविचल होते हुए भी सर्वत्र पहुँचा हुआ है। उसकी पहुँच सम्पूर्ण जगत् में सदा बनी हुई है। वह हमारे समीप भी है, दूर-दूर जहाँ भी हम जावें, वहाँ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भी वह विराजमान है। वह कण-कण के अन्दर समाया हुआ है, वह इस जगत् के बाहर भी विराजमान है। वह सर्वत्र व्यापक है। विश्व इस ईश में समाया हुआ है।

हे जीव ! तू सावधान रह। तेरा कोई चिन्तन या कर्म उस ईश से छिपा हुआ नहीं। जो करेगा सो भरेगा। कुछ भी उससे छिपा न रहेगा।

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवानुपश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सति ॥६॥

(यस्तु) जो तो (सर्वाणि भूतानि) सब प्राणियों को (आत्मनि एव) आत्म भावना में ही (अनुपश्यति) अनुकूलता के साथ देखता है। (सर्वभूतेषु) और सब प्राणियों में (आत्मानम्) आत्म भावना को देखता है। (ततः) उसके बाद वह (न विचिकित्सति) संशय या सन्देह में नहीं रहता।

हे जीव ! जिस अवस्था में सब ईश में समाया है हम तुम और सब प्राणी ईश की अमर सन्तान हैं, हम सब परस्पर आत्मीय हैं, बन्धु हैं। अपनी दृष्टि को सूक्ष्म और विशाल बना लो तो सभी प्राणियों में तुम्हें अपनेपन की, आत्मा की अनुभूति होगी। स्थूल और संकुचित दृष्टि से तुम्हारा परिवार, तुम्हारी आत्मभावना, तुम्हारा मेरापन कुछ थोड़े प्राणियों में सीमित बना हुआ है। इन मेरेपन की संकुचित दीवारों को तोड़ दो। टूटना तो इन्हें है ही। तुम न तोड़ोगे तो एक दिन यमराज इन्हें जबरदस्ती तोड़ देगा। उस अवस्था में जिन्हें तुम अपना कह रहे हो, वे गैर हो जावगे और जिन्हें तुम गैर कह रहे हो, यमराज तुम्हें वहीं खींचकर ले जावेगा।

इसी जन्म में अभी इस तत्व को समझो और सभी प्राणियों में आत्म भावना भर लो। आत्म भावना में, अपनेपन के घेरे में सब प्राणियों को ले लो। विश्व के सभी प्राणी तुम्हारे बन्धु बन जावें, विश्व के सभी प्राणी तुम्हारा एक परिवार बन जायं। यही विश्व-बन्धुता है, यही वैदिक साम्यवाद है।

यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद् विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ॥७॥

(यस्मिन्) जिस अवस्था में (विजानतः) ज्ञानी पुरुष के लिए (सर्वाणि भूतानि) सब प्राणी (आत्मा एवं अभूत्) आत्मभावना में समा गये। (तत्र) उस अवस्था में (एकत्वम् अनुपश्यतः) एक आत्म भावना, बन्धु भावना में सब प्राणियों को देखने वाले ज्ञानी पुरुष के लिए (कःमोहः) मोह कहाँ रहेगा ? (कः शोकः) शोक कहाँ रहेगा ?

मेरा और तेरापन की संकुचित भावना से ही मोह और शोक अन्तःकरण में छाये रहते हैं। जिसके अन्तःकरण में सब प्राणियों के लिए अपनेपन की भावना बन्धुभावना, आत्मीयता समा गई है, उसके समीप मोह और शोक आ नहीं सकता। सूक्ष्म और विशाल दृष्टि बनालो। सब प्राणियों में समान रूप से अपनेपन की भावना, आत्मभावना बना लो। इस आत्मभावना से लोक को देखने के बाद तुम्हारे अन्तःकरण में मोह और शोक नहीं रहने पावेगा। इस आत्मभावना से लोक को देखने के बाद कोई बिछुड़ा न दीख पाएगा। आत्मा केवल चोला बदलता है। स्थान बदलता है। रहता इसी विश्व में है। विश्व के सभी प्राणियों में आत्मीयता की भावना होने पर सभी मेरे बन्धु सदा के बन्धु बने रहते हैं। कोई गैर नहीं बनता। अपने और पराये का भेद नष्ट हो जाता है। सभी का हित मेरा हित बन जाता है। किसी भी प्राणी का अहित हम सबका अहित बन जाता है। यह है वैदिक साम्यवाद।

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं
शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूः याथातथ्यतोऽर्थान्
व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ॥८॥

(सः) वह (परि अगात्) सब ओर पहुँचा हुआ है। (शुक्रम्) शुभ्र ज्योतिःस्वरूप है। (अकायम्) उसकी काया नहीं। (अव्रणम्) विकार रहित है। (अस्नाविरम्) उसमें कोई नस नाड़ी नहीं। (शुद्धम्) वह शुद्ध है। (अपापविद्धम्) पाप उसे बींध नहीं सकता। (कविः) वह सूक्ष्मदर्शी है। (मनीषी) पूर्ण ज्ञानी है। (परिभूः) सर्वत्र व्यापक है। (स्वयंभूः) स्वयं अपनी शक्ति व स्वभाव से सर्वत्र विराजमान है।

वही ईश सर्वत्र (शाश्वतीभ्यः समाभ्यः) अनादि काल से (याथातथ्यतः) यथा तथा रूप में, शाश्वत नियमों के अनुसार (अर्थान्) संसार के समस्त पदार्थों को (व्यदधात्) बनाता आ रहा है।

यह विश्व ईश में समाया हुआ है, ईश सर्वत्र व्यापक है। शुभ्र ज्योतिः स्वरूप है, सर्वत्र देदीप्यमान है। काया बन्धन से परे है। नस नाड़ियों के जकड़ाव से परे है। निर्विकार है। शुद्ध स्वरूप है। पाप से विद्ध नहीं होता। सदा सत्य से—न्याय से सम्पूर्ण जगत् को नियन्त्रण में रखता है। जगत् के सम्पूर्ण कलाकलाप को देख रहा है। अपने अनन्त ज्ञान की प्रतिभा से सम्पूर्ण जगत् का संचालन करता है। सम्पूर्ण जगत् के अन्दर-बाहर व्यापक है। उसका कोई निर्माता नहीं है। वह सनातन सत्य है। वही (याथातथ्यतः) सदा एकरूप सनातन नियमों के अनुसार जगत् का निर्माण करता आया है। सृष्टि और प्रलय के अनादि क्रम का वही एक मात्र नियामक है।

हे जीव ! तू उसके शुभ ज्योतिर्मय स्वरूप को देख। उसके विराट्रूप को देख। उसके नियम अटल हैं। तू

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जैसा करेगा वैसा भरेगा। वह परिभू है, उसने अपने घेरे में नियन्त्रण में सारे विश्व को बनाए रखा है। तुझे कार्य करने में, ईश ने स्वतन्त्रता दे रखी है पर कर्मफल का भोग तो उसके सत्य न्याय के अनुसार भोगना ही पड़ेगा। फलभोग में तू परतंत्र है। उसके नियम शाश्वत हैं, सबके लिए एक समान हैं। उन्हीं शाश्वत नियमों के अनुसार जगत् का निर्माण करता है और उन्हीं के अनुसार प्राणियों में योनिव्यवस्था करता है।

शुद्धस्वरूप ईश के घेरे में रहते हुए स्वयं को शुद्ध बनाओ। पाप से विद्ध न बनो। कर्म करते हुए जीने की इच्छा करो। किसी का परिश्रम न छीनो।

सम्भूति और विनाश

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भय इव ते तमो य उ सम्भूत्यां रताः ।९।

(ये) जो जन (असम्भूतिम्) अभाव, नास्ति, अनुपलब्धि की (उपासते) उपासना करते हैं वे (अन्ध तमः) घोर अन्धकार में (प्रविशन्ति) प्रवेश करते हैं। (ये उ) और जो (सम्भूत्यां रताः) भाव, अस्तित्व, उपलब्धि में रत हैं वे (ततः भूय इव) उससे भी अधिक (तमः) घोर अन्धकार में प्रवेश पाते हैं।

यह जगत् चल है। निरन्तर गतिशील है। इसमें असम्भूति और सम्भूति का चक्र चल रहा है। दोनों साथ-साथ व्यष्टि और समष्टि रूप में चल रहे हैं। एक समय असम्भूति है, एक वस्तु का अभाव है, अनुपलब्धि है, दूसरे समय में उसकी सम्भूति हो जाती है, वह वस्तु हमें उपलब्ध हो जाती है।

ईश भी प्रलय और सृष्टि का क्रम बनाए हुए हैं। प्रलय असम्भूति की अवस्था है। सृष्टि सम्भूति की अवस्था है।

इस असम्भूति और सम्भूति के चक्र में कुछ लोग असम्भूति की उपासना करते हैं। जगत् के चल स्वभाव होने से प्रत्येक वस्तु जो आज मेरे पास है, जिसे मैं 'मेरी' कहता हूँ, किसी समय वह मेरे पास न रहेगी, सम्भूति से असम्भूति में परिवर्तित हो जावेगी। यह देखकर कुछ विरक्त लोग असम्भूति की (जगत् के नश्वर रूप की) उपासना करते हैं। सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ के नाशवान् होने से एकमात्र त्याग का उपदेश देते हैं। एकमात्र त्याग निराशा की ओर ले जाता है और निराशा अन्धकार है।

इसके विपरीत जो लोग केवल सम्भूति की उपासना करते हैं और यह समझ बैठते हैं कि हमने इसी रूप में सदा यहाँ रहना है, हमें जो समृद्धि आज प्राप्त है, वह सदा हमारे पास रहेगी, वे अधिक घोर अन्धकार को प्राप्त करते हैं। वे इस तत्त्व को भूल जाते हैं कि सृष्टि का प्रत्येक पदार्थ चल है। कोई वस्तु सदा किसी के पास नहीं रहती।

सम्भूति का असम्भूति में परिवर्तन अवश्यंभावी है। जो वस्तु आज जिस रूप में है, कुछ समय बाद वह उस रूप में नहीं रहेगी। प्रत्येक वस्तु के दो किनारे हैं — सम्भूति और असम्भूति, उत्पत्ति और विनाश। समष्टि रूप में भी जगत् के सम्भूति और असम्भूति, सृष्टि और प्रलय दो रूप हैं। इसे कोई रोक नहीं सकता।

इस तत्त्व को न समझने वाले सम्भूति के उपासक प्रिय वस्तु के वियोग से शोक और मोह में सन्तप्त होकर घोर अन्धकार को अनुभव करते हैं।

सम्भूति और असम्भूति, उत्पत्ति और विनाश, सृष्टि और प्रलय का प्रवाह अनादि काल से चला आ रहा है। सदा चलता रहेगा।

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्यदाहुरसम्भवात्।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद् विचचक्षिरे ।१०।

(सम्भवात्) सम्भूति की उपासना से (अन्यत् एव आहुः) अन्य ही फल कहा गया है। (असम्भवात्) असम्भूति की उपासना से (अन्यत् आहुः) अन्य फल कहा गया है।

(धीराणाम्) उन धीर पुरुषों के मुख से (ये) जिन्होंने (नः) हमारे लिए (तत्) उस सम्भूति और असम्भूति की (विचचक्षिरे) विवेचना की है (इति) इस प्रकार (शुश्रुमः) सुनते चले आ रहे हैं।

सम्भव=पदार्थ का हमारे पास होना, उपलब्धि।
असम्भव=पदार्थ का हमारे पास न होना, अनुपलब्धि अथवा छूट जाना।

अध्याय के प्रथम मन्त्र में उपदेश है—(त्यक्तेन भुञ्जीथाः) संसार के पदार्थों का भोग करो, पर त्याग-भाव से भोग करो। निर्लिप्त भावना से कार्य करते हुए भोग करो।

ईश ने जगत् के पदार्थ भोग के लिए बनाये हैं। जीवन के लिये भोग है। भोग के लिए जीवन नहीं। भोग करो, पर इसमें लिप्त न हो जावो। छोड़ना भी सीखो।

केवल भोगवाद और त्यागवाद दोनों ही दुःख के कारण हैं। त्याग-भावना से जीवन के लिए कर्म करते हुए संयम के साथ भोग सुख प्राप्ति का साधन है।

केवल त्याग से जीवन का विनाश हो जाता है। केवल भोग से शरीर और मन में विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

त्याग के साथ भोग, जीवन के लिए भोग, शरीर और मन को स्वस्थ बनाए रखेगा। तुम सौ वर्ष तक कर्मशील बने रहोगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सम्भूतिं च विनाशं च यस्तद् वेदोभयं सह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्याऽमृतमश्नुते।११।

(यः) जो (सम्भूतिं च विनाशं च) सम्भूति और विनाश (तत् उभय) उन दोनों को (सह) एक साथ (वेद) जानता है, वह (विनाशेन) विनाश की जानकारी से (मृत्युं तीर्त्वा) मृत्यु को तैर कर (सम्भूत्या) सम्भूति के ज्ञान से (अमृतम्) अमृत का (अश्नुते) उपभोग करता है।

सम्भूति और विनाश=सृष्टि और प्रलय, जन्म और मरण, उत्पत्ति और नाश, लाभ और हानि दोनों को साथ-साथ देखो। जीवन में दोनों अवश्यम्भावी हैं। इसी से संसार चल रहा है। अपने शरीर को देखो। गर्भ में शिशु वीर्य और रज के कणों से बनता और बढ़ता है। वे कण अपने स्वरूप का विनाश कर भ्रूण का निर्माण करने में सहायक होते हैं। बीज नष्ट होकर वृक्ष उत्पन्न करता है। विनाश के बिना निर्माण हो नहीं सकता। विनाश न हो तो उत्पत्ति नहीं हो सकती। उत्पत्ति के बाद पुनः विनाश अवश्यम्भावी है।

संसार के सभी पदार्थ उत्पन्न होकर नष्ट होंगे, नष्ट होकर उत्पन्न होंगे। शरीर अनित्य है। सम्पदा चलायमान है। आत्मा पुरानी काया को छोड़कर नई काया में प्रवेश करता रहता है। आत्मा शब्द का अर्थ ही है जो लगातार एक शरीर से दूसरे शरीर में गमन करता रहे। इस तत्त्व को समझो। इस तत्व के समझने से विनाश प्रतीत नहीं होगा। तुम विनाश के साथ होने वाले शोक से संतप्त न होगे। अपनी सम्पदा और कुटुम्ब में कष्ट देने वाला मोह तुम्हारे अन्तःकरण में प्रवेश का साहस न करेगा। मृत्यु मृत्यु का रूप न रहेगा। तुम स्वयं को अमर समझोगे।

विनाश के रूप को समझो, तुम मृत्यु पर विजय पावोगे। सम्भूति के रूप को समझो, तुम अमृत का आनन्द पूर्वक उपभोग कर सकोगे।

अविद्या और विद्या

अन्धं तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः।१२।

(ये) जो (अविद्याम् उपासते) अविद्या की उपासना करते हैं वे (अन्धं तमः) अन्धकार में (प्रविशन्ति) प्रवेश करते हैं। (ये उ) और जो (विद्यायां) विद्या में ही (रता) रत हैं, लगे रहते हैं (ते) वे (ततः) उनसे भी (भूयः) अधिक (तमः) अन्धकार में प्रवेश पाते हैं।

अविद्या=अज्ञान=ज्ञान का अभाव। जो जन अविद्या की उपासना करते हैं, अज्ञान की अवस्था में रहना चाहते हैं वे सदा अन्धकार में बने रहते हैं, ईश ने, प्रभु ने तुम्हें ज्ञानेन्द्रियां दी हैं, बुद्धि दी है। देखो, जानो, परखो और उसके अनुसार कर्म करो। यही जीवन मार्ग है। नहीं देखोगे, ज्ञान प्राप्त नहीं करोगे तो अंधकार में पड़े रहोगे। पद-पद पर ठोकर खाओगे।

केवल विद्या की, ज्ञान की उपासना करोगे तो उससे भी अधिक अन्धकार में पड़े रहोगे। देखो, जानो, परखो और उसके अनुसार कर्म करो। केवल ज्ञान, कर्म-हीन ज्ञान से तुम कर्मशील अज्ञानियों की अपेक्षा भी अधिक अन्धकार में बने रहोगे। कर्म जीवन है। अकर्म मृत्यु है।

ज्ञान के साथ, जानने के साथ भूलना भी सीखो। जो दर्शन, श्रवण और दर्शन श्रवण से श्रेयस्कर ज्ञान हो, उसे तो अन्तःकरण में संभाल कर रखो। जो अश्रेयस्कर ज्ञान हो, जिस ज्ञान की स्मृति से मोह, शोक, क्रोध आदि विकारों की जागृति हो, उसे भूल जाओ। ऐसे ज्ञान को अज्ञान में परिवर्तित कर दो। अश्रेयस्कर ज्ञान की स्मृति तुम्हें मोह, शोक, क्रोध और विकारों में फंसाये रखेगी। जीवन को घोर अंधकार में ले जावेगी। कर्महीन श्रेयस्कर ज्ञान तुम्हें उससे अधिक अंधकार में बनाए रखेगा। तुम्हारे सामने सदा निराशा के बादल छाए रहेंगे।

अन्यदेवाहुर्विद्याया अन्यदाहुरविद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद् विचचक्षिरे।।१३।।

(विद्यायाः) विद्या का, ज्ञान का (अन्यद् एव) अन्य ही फल (आहुः) कहा जाता है। (अविद्यायाः) अविद्या का, (अन्यद् आहुः) अन्य फल कहा जाता है। (ये) जो विद्वान् (नः) हमारे लिए (तद्) उस विद्या और अविद्या दोनों के फल की (विचचक्षिरे) विवेचना करते आये हैं, उनके द्वारा (इति) इस प्रकार (शुश्रम) सुनते हैं।

विद्या=ज्ञान हमें प्रकाश देता है। दिव्य दृष्टि देता है। अविद्या=अज्ञान=अचेतन प्रकृति हमें सञ्चार देती है। विद्या=ज्ञान=चैतन्य=चक्षु है। अविद्या=अज्ञान=अचेतन प्रकृति, प्रगति का, कर्म का एकमात्र साधन है। ज्ञान का प्रतीक जीव है। अज्ञान का प्रतीक प्रकृति तथा भौतिक शरीर है। दोनों के अलग-अलग प्रयोजन हैं अलग-अलग कर्म हैं।

इसी प्रकार—

विद्या=ज्ञान=प्रकाश है, चैतन्य है। अविद्या=अज्ञान=सुषुप्ति की अवस्था है। दोनों के अलग-अलग प्रयोजन हैं, दोनों के अलग-अलग फल हैं।

इसी प्रकार—

विद्या=ज्ञान प्रतिभा का प्रतीक है। अविद्या=अज्ञान श्रम का प्रतीक है। प्रतिभा और श्रम दोनों के अलग-अलग अपने प्रयोजन हैं। विद्या=ज्ञान प्रतिभा का प्रतीक है। अविद्या=अज्ञान, भौतिक उपकरणों का मशीन आदि का प्रतीक है। दोनों के अलग-अलग प्रयोजन हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विद्यां चाविद्यां च यस्तद् वेदोभयं सह ।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥१४॥

(यः) जो (विद्यां च अविद्यां च) विद्या और अविद्या (उभयं) दोनों को (सह) एक साथ (वेद) जानता है, वह (अविद्यया) अविद्या के द्वारा (मृत्युं) मृत्यु को (तीर्त्वा) तैरकर (विद्यया) विद्या के द्वारा (अमृत) अमृत को (अश्नुते) भोगता है।

विद्या=ज्ञान=अनुभूति भोग का साधन है। अविद्या=अज्ञान=अनुभूति का न होना=सुषुप्ति की अवस्था है।

विद्या=ज्ञान=चैतन्य जीव का प्रतीक है। अविद्या=ज्ञान का अभाव अचेतन प्रकृति का प्रतीक है।

जीव प्रकृति निर्मित अचेतन शरीर से ही कर्म करेगा, शरीर से ही प्रगति करेगा। जीव अचेतन, जड़ जगत् के सहारे ही जीने की इच्छा कर सकेगा।

कर्म के द्वारा ही संकटों से मुक्ति और कर्म के द्वारा ही मृत्यु पर विजय मिल सकती है।

अमृत का भोग तो ज्ञान का केन्द्र जीव ही करेगा, पर मृत्यु पर विजय प्राप्त करने के लिए जो भी कर्म करेगा, उसका साधन यह अज्ञान का प्रतीक प्रकृति है, प्रकृति से सम्पन्न जड़ जगत् है, प्रकृति के पञ्चभूतों से निर्मित शरीर है। जगत् को मिथ्या मानकर इसकी उपेक्षा मत करो। जगत् में ऐसे लिप्त भी न हो जाओ कि स्वयं को शरीर के अन्दर बैठे विद्या=ज्ञान के प्रतीक जीव को, आत्मा को भूल जाओ। अविद्या से, कर्म से मृत्यु पर विजय प्राप्तकर ज्ञान से अमृत का उपभोग करो।

इसी प्रकार—

विद्या ज्ञान और प्रतिभा का प्रतीक है। अविद्या ज्ञान के अभाव, ज्ञानहीन श्रम का प्रतीक है। प्रतिभा और श्रम दोनों का समान भाव से आदर करो। विद्या, ज्ञान, प्रतिभा से जगत् की जानकारी प्राप्त करो। इसके रहस्य की खोज करो। रहस्य को जानकर अपने व्यवसाय को चलाओ। ज्ञान के जगत् के रहस्य को समझे बिना अमृत का, सुखका उपभोग नहीं कर सकते। इसके साथ-साथ ही इस बात को भी समझो कि श्रम के बिना तुम्हारा ज्ञान पंगु है, लंगड़ा है। विद्या=ज्ञान=प्रतिभा के साथ श्रम के मूल्य को समझो।

अपने व्यवसाय में अपने ज्ञान को या प्रतिभा को सब कुछ समझ कर श्रम की उपेक्षा करोगे तो संकट का सामना करना पड़ेगा। श्रम की उपेक्षा से व्यवसाय का अन्त सामने नजर आवेगा।

यदि मृत्यु को तैरना चाहते हो, यदि व्यवसाय की संकटों से मुक्ति चाहते हो तो श्रम की रक्षा करो। श्रमिक सुखी रहे, संतुष्ट रहे, हृष्ट पुष्ट रहे, तभी मालिक की प्रतिभा उसे आनन्द के मार्ग पर, अमृत के उपभोग के लक्ष्य पर पहुँचाएगी।

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् ।
ओं क्रतो स्मर ! क्लिबे स्मर । कृतम् स्मर ॥१५॥

(वायु.) क्रियाशील ज्ञान का प्रतीक आत्मा (अनिलं) पार्थिव नहीं है, भौतिक नहीं है। (अमृतम्) अमृत है, कभी नष्ट होने वाला नहीं है।

(अथ) और (इदं) यह (शरीरं) शरीर (भस्मान्तं) भस्म के रूप में समाप्त होने वाला है।

(क्रतो) हे क्रियाशील जीव ! (ओम् स्मर) ओम का स्मरण कर।

(क्लिबे स्मर) शक्ति प्राप्त करने के लिए ओम् का स्मरण कर। इस शरीर में जीव है। संस्कृत में 'इला' पृथ्वी को कहते हैं। जो इला से नहीं बना, पार्थिव नहीं, वह 'अनिल' जीव अमर है।

कर्म करता हुआ जीव सौ वर्ष पर्यन्त जीने की इच्छा करे। संसार के पदार्थों का उपभोग करे। उपभोग करते हुए यह स्मरण रखे कि इस शरीर का अन्त भस्म है, राख है। भोगों का दास न बने। शरीर और इन्द्रियों का दास न बने। शरीर का स्वामी बन कर रहे। भोग शरीर को स्वस्थ, सुन्दर तथा कर्मशील बनाने का साधन बने रहें। संसार के पदार्थों का भोग दुःख का कारण न बने। भोग जीवन का साधन है, कर्म करने के लिए, शक्ति सम्पदा के सम्पादन के लिए है। भोग शरीर का नाश करने के लिए नहीं है। संसार के पदार्थों का भोग करो, पर ध्यान रखो कि भोग तुम्हें न खा जावे।

शरीर का अन्त भस्म है। शरीर में कर्म करने के लिए, जीवन के लिए जितना भोग आवश्यक है वह तो तुम्हारा है। शेष पर तुम्हारा अधिकार नहीं। शरीर के भस्म हो जाने पर वह तुमसे छूट जावेगा। शरीर छूटने पर तुम वहाँ वापिस न आओगे, जहाँ ये भोग के लिए साधन तुम छोड़ गए हो। नए बन्धु बान्धव तुम्हें मिलेंगे। जिन बन्धुओं से तुमने मोह की गाँठ बांधी है, वे गैर बन जावेंगे।

धन की तीन गतियाँ हैं; दान, भोग और नाश। शरीर को कर्म करने के लिए, शक्ति देने के लिए, जीवन के लिए जितने धन की आवश्यकता है उसका उपभोग करो। शेष दे दो। उन श्रमिकों को दे दो, जो काम करते हुए जीवन के लिए आवश्यक पदार्थ नहीं पा सकते अथवा जो शरीर में अंगहीनता या विकार के कारण जीवन के साधन जुटाने में असमर्थ हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हे जीव! तू ओम का स्मरण कर। वही तेरा पिता है, वही माँ भी है। सब प्राणी तेरे बन्धु हैं। वही ओम् तुझे शक्ति देता है। उसकी शरण में अपने आपको रख, शुभ कर्म कर। उसके आदेश का पालन कर, वही कर्मः फलदाता है। यही वैदिक साम्यवाद है।

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो
भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥१६॥

(अग्ने) हे ज्योति और शक्तिरूप ईश। (अस्मान्) हमें (सुपथा) अच्छे मार्ग से (राये) धन उपार्जन के निमित्त (नय) ले चल। (देव) हे देव! तुम (विश्वानि वयुनानि) हमारे सब कर्मों को (विद्वान्) जानते हो। (अस्मत्) हमारे (जुहुराणं) कुटिलताओं को (एनः) पापों को (युयोधि) नष्ट करो। हम (ते) तेरे प्रति (भूयिष्ठां) बहुत-बहुत (नमः उक्तिं) नमस्कार वचन (विधेम) प्रस्तुत करते हैं।

हे जीव! ईश में यह विश्व समाया है। वह ईश अग्नि है, ज्योति और शक्ति का रूप है। संसार में जीने के लिए जीवन के हेतु आवश्यक धन सम्पदा प्राप्त करने के लिए सदा शुभ कर्मों का अनुसरण कर। कर्म करते हुए उस ओम् को, ईश को स्मरण कर। वह तुझे सुपथ दिखाएगा। उस ओम् का स्मरण तुझे सुपथ पर चलने के लिए शक्ति देगा। वह अग्नि है, शक्ति तेज का पुञ्ज है, प्रकाश है। उसके प्रकाश में रहता हुआ तू कुटिल कर्मों और पापों से बचा रहेगा। वह देव है, उसकी शरण में स्वयं को बनाए रखेगा तो तू भी देव बन जावेगा। सदा उसके प्रति श्रद्धा और विश्वास के साथ नतमस्तक होकर रह। उसका आशीर्वाद तुझे आनन्द के मार्ग पर ले जावेगा। उसके आशीर्वाद से तू मृत्यु पर विजय पा सकेगा।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्।
ओं खं ब्रह्म ॥१७॥

(हिरण्मयेन) सुवर्ण के (पात्रेण) पात्र से (सत्यस्य) सत्य का (मुखं) मुख (अपिहितम्) ढका हुआ है। (यः) जो (असौ) वह (आदित्ये) आदित्य में—ज्योतिः स्वरूप दयालु ईश में, ओम् में (पुरुष) शयन करता हुआ जीव दीख रहा है। (सः असौ) वही (अहम्) मैं हूँ।

(ओम्) ओम्—सब का रक्षक ईश (खं) सर्वव्यापी है। (ब्रह्म) महान् है।

सत्य का मुख स्वर्ण के पात्र से ढका हुआ है। संसार के प्रलोभन सत्य के रूप को देखने नहीं देते। प्रलोभनों का चमत्कार सत्य पर आचरण नहीं करने देता। मिथ्या भाषण से, रिश्वत लेने से, चोरी से, छल कपट से, बिना परिश्रम के आती हुई सम्पदा की चमक हमें सत्य के मार्ग से परे ले जाती है। हम यह भूल जाते हैं कि इन उपायों से सम्पदा का संचय कर हम जीवन मार्ग पर नहीं जा रहे। आत्महनन के मार्ग पर जा रहे हैं। ऐसे भोग मार्ग पर जा रहे हैं जो हमें खा जावेगा।

भोग जीवन के लिए है। जीवन भोग के लिए नहीं है। भोग को जीवन का साधन बनाओ। जीवन को भोग का साधन बनाने से भोग तुम्हें खा जावेगा, जीवन का आनन्द नष्ट हो जावेगा, शरीर क्षीण हो जावेगा, मन में चिन्ता समाई रहेगी, तृष्णा कभी शांत न हो पावेगी।

सत्य पर छाया हुआ सुवर्ण का आवरण तृष्णा को कभी शान्त नहीं होने देगा। तृष्णा की आग सदा धधकती रहेगी। इसके पीछे चिन्ता मन को बेचैन करती रहेगी। चिन्ता से शरीर क्षीण हो जावेगा।

अमृत के भोग के लिए, आनन्द के भोग के लिए सम्पदा चाहते हो तो सम्पदा के स्वामी बनो। इसके दास मत बनो।

स्मरण रखो कि यह सम्पदा तुम्हारे स्वामी ईश की देन है। तुम मनुष्य हो, ज्ञानवान् हो। बन्दरों की तरह सम्पदा पर मत झपटो। सत्य से कर्मशील बनकर इसे प्राप्त करो। ईश पर, "ओम्" पर सर्वव्यापी, महान् ओम् पर विश्वास बनाए रखो। किसी के श्रम को छीनने की चेष्टा मत करो।

ज्योति और तेज के पुञ्ज आदित्य को देखो। उसका प्रकाश सबके लिए है। सुवर्ण के, प्रलोभनों के आवरण से निकल कर उसके प्रकाश में आओ। सबको समान रूप से उसका प्रकाश मिलेगा। उसकी शक्ति मिलेगी। उसकी ओर पीठ मत करो। उस आदित्य को, उस सर्वव्यापी ब्रह्म को, उस ओम् को देखो। श्रद्धा की भावना से, विनीत भावना से उसका स्मरण करो। तुम उसी में समाए हो। उसी के गर्भ में हो। जो आदित्य में पुरुष—शरीर रूपी पुरी में सोता हुआ जीव है, वही तुम हो, वही तुम हो।

इस प्रकार अपनी मनोवृत्ति बनाने से तुम मोह और शोक से परे हो जाओगे। विश्व तुम्हारा हो जावेगा। तुम विश्वबन्धु बन जाओगे।

सच्चिदानन्द ब्रह्म के सदानन्द में तुम भी सानन्द बन जाओगे। □

(पृष्ठ १९ का शेष)

(यजुः १।२) वायुमण्डल के घर्म अर्थात् ताप-तेज को संयुक्त करके शुद्ध करता है। यद्यपि यह सब कार्य प्रकृति में स्वाभाविक रूप से होता ही रहता है परन्तु यज्ञ प्रक्रिया द्वारा उसी प्राकृतिक प्रक्रिया के क्षेत्र विशेष में विशेष न्यूनाधिकता सम्पन्न होती है जिससे ऋतु प्रभावित हो सकती है।

यज्ञ के प्रभावों का अनुसन्धान हो

इस प्रकार से जब किसी एक क्षेत्र में ही यज्ञ होता है तो उसका प्रभाव उस क्षेत्र में विशेष प्रभावशील दृष्टि-गोचर होता है। हमारे देश में जहां-जहां वेधशालायें हैं उन-उन स्थानों पर यदि यज्ञ होते रहें तो उसका प्रभाव हमारे सम्पूर्ण देश और उससे संलग्न समुद्र पर तथा दोनों के वायुमण्डल पर प्रभावशील होगा। ऋतुओं पर अद्भुत प्रभाव दृष्टिगोचर होगा। यज्ञ द्वारा वायुमण्डल के प्रभावों का अनुसन्धान वेधशालाओं द्वारा सुगमता से हो सकता है। ●

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

— विजय

वीराग्रणी रावचन्द्रसेन

राजस्थान की वीर प्रसविनी धरा ने हिन्दूकुल सूर्य महाराणा प्रताप से पूर्व एक अन्य स्वातन्त्र्य शलभ को भी जन्म देकर स्वयं को कृतकृत्य किया था। यह थे मारवाड़ के राठौर नरेश राव भालदेव जी की झाली रानी के सुपुत्र रावचन्द्र सेन। इस नरनाहर का जन्म संवत् १५९८ श्रावण वदी अष्टमी शुक्रवार (१५६२ ई० की १६ जुलाई) को हुआ था।

होनहार बिरवान के होत चीकने पात की उक्ति को चरितार्थ करने वाले राव चन्द्रसेन बाल्यकाल से ही नितान्त मेधावी एवम् शौर्य के प्रतीक थे। उनकी वीरता के कारण ही उनके पिता राव भालदेव ने अपने सरदारों एवं सामन्तों को यह निर्देश दे दिया था कि मेरे पश्चात् मारवाड़ के शासन की बागडोर रावचन्द्रसेन को ही अर्पित की जाए। मारवाड़ नरेश की उस आकांक्षा के कारण राव चन्द्रसेन के बड़े भ्राता उदय सिंह तथा अन्य बन्धु रुष्ट हो गये थे।

राव चन्द्रसेन ने मारवाड़ को प्रगति के पथ पर आरूढ़ किया और जनता ने भी एक लोकरंजक शासक को पाकर सुख सुविधा एवं शांति का अनुभव किया। न्यायप्रिय, दूरदर्शी राव चन्द्रसेन की यशगाथा यत्र, तत्र सर्वत्र व्याप्त होने लगी तो उनकी वीरता और शौर्य ने दिल्ली के मुगल सम्राट् अकबर को भी इनके प्रति स्वाभाविक रूप से ही ईर्ष्यालु बना दिया। राजपूत जाति की संगठित शक्ति के परिणामस्वरूप मारवाड़ राज्य को नवीन बल मिला। किन्तु प्रकृति का विधान भी विचित्र ही होता है। ऐसा ही राव चन्द्रसेन की स्थिति में भी हुए बिना न रहा। राव चन्द्रसेन ने शासन स्वयं संभालने के उपरान्त अपने एक दास को किसी अपराध पर मृत्युदण्ड दे दिया। इसके परिणामस्वरूप अनेक सरदार भी राव चन्द्रसेन से रुष्ट हो गए। इन सभी ने राव चन्द्रसेन के बड़े भाई उदयसिंह से फलौदी में भेंट कर उन्हें राव चन्द्रसेन पर आक्रमण करने के लिए प्रेरणा दी। उदय सिंह ने आक्रमण तो किया किन्तु उसे पराजय और अपमान के अतिरिक्त और कुछ हाथ न लग पाया। इस युद्ध में रावचन्द्रसेन ने विजयश्री का तो वरण कर लिया किन्तु इस युद्ध से एक ऐसा क्रम आरम्भ हुआ कि फिर राव चन्द्रसेन को जीवन भर युद्ध ही करने पड़े।

अपने मारवाड़ का सिंहासन संभाले अभी दो वर्ष ही हुए थे कि विक्रमी संवत् १६२० में आपके छोटे भाई रामसिंह ने भी आप पर धावा बोल दिया जो सोजत में रह रहा था। उसे भी सफलता तो न मिली किन्तु इतिहास ने अपनी पुनरावृत्ति कर दी। जिस प्रकार महाराज पृथ्वीराज से अपमानित हुए जयचंद ने गौरी की शरण ली थी, उसी भाँति रामसिंह भी दिल्ली के मुगल सम्राट् अकबर से जा मिला। अकबर ने मारवाड़ के राजपरिवार की इस घरेलू फूट को अपने लिए स्वर्ण सन्धि समझा और उसने तत्काल ही अपने सेनापति हुसैन कुलीबेग के नेतृत्व में एक बलशाली सेना वि० सं०१६२१ चैत्र सुदी १२ को रावचन्द्रसेन पर आक्रमण करने के लिए भेज दी। रावचन्द्रसेन निरन्तर दो मास तक मुगल सेना का मुकाबला किया। किन्तु इस सतत संग्राम के परिणामस्वरूप मारवाड़ दुर्ग में संचित खाद्यान्न घटता गया। किन्तु उस समय रावचन्द्रसेन ने अपनी कुशाग्र बुद्धि का उपयोग कर बड़ी ही सतर्कता सहित सारे दुर्ग को खाली कर दिया और आप वीर राजपूतों को साथ लेकर भाद्राजण पहुँच गए। वहाँ से आप मुगल सेना पर बार-बार आक्रमण करते रहे। आपने मुगल साम्राज्य की विशाल वाहिनी से टकराने के लिए छिप कर धावे बोलने की पद्धति का अनुगमन किया। इससे अकबर और भी अधिक क्षुब्द हो उठा। उसने राव साहब से प्रतिशोध लेने हेतु नागौर के काला खाँ को भाद्राजण पर आक्रमण करने का निर्देश दिया। तदनुसार वि० सं० १६२७ में कला खाँ रावचन्द्र सेन पर टूट पड़ा। दोनों ओर से दुर्धर्ष संग्राम कई दिनों तक चला। जब अपनी स्थिति दुर्बल होती देखी तो राव चन्द्रसेन ने अपनी बुद्धि का उपयोग कर कलाखाँ से समझौता कर लिया और अपने विश्वस्त वीरों को साथ लेकर सिवाना दुर्ग से चले गये। इसी बीच राव चन्द्रसेन व मुगल सम्राट् अकबर की भी नागौर में भेंट हुई। अकबर ने उन्हें अनेक प्रकार के प्रलोभन देकर अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया। किन्तु रावचन्द्रसेन ने अपने जीवन में आर्य मर्यादाओं को संजोया था, अतः उन्होंने मुगल शासक की दासता की शृंखला में आबद्ध होने से स्पष्टतः इंकार कर दिया।

राव चन्द्रसेन ने उन अपनों को भी दण्ड देने से कदापि संकोच न किया जो जनता को आतंकित करना ही अपना कार्य मानते थे। ऐसा ही एक अत्याचारी मीन राजा मादलिक्ष भी उनके प्रकोप का निशाना बना। राव चन्द्रसेन ने उसे भगाकर भिनाय नार पर अधिकार जमा लिया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस कारण से अकबर और भी अधिक विक्षुब्ध हो उठा और मुगल सेना ने वि० सं० १६२१ में सिवाना दुर्ग पर आक्रमण कर दिया। सिवाना के सघन वनों में मुगल सेनाओं और राजपूत सेनाओं में मुकाबला हुआ। पर्वतमालाओं में हुए इस संग्राम ने मुगल सेना को भयभीत कर दिया और वह लौट गई। तदुपरान्त अकबर ने जलाल खां के नेतृत्व में वि० सं० १६२२ में सिवाना पर आक्रमण करने के लिए एक विशाल सेना भेज दी। राव चन्द्रसेन को जब समाचार मिला तो उन्होंने पहले ही जलाल खां की सेना पर ऐसा प्रबल प्रहार किया कि जलाल खां को तो उन्होंने अपनी तलवार का आहार बना दिया और उसका साथी शिमाल खां पलायन करने पर बाध्य हो उठा।

राव चन्द्रसेन के इस कारनामे ने अकबर की क्रोधाग्नि और भी अधिक भड़का दी। अब उसने शहबाज खां के नेतृत्व में एक विशाल वाहिनी (वि० सं० १३३३) को सिवाना पर आक्रमण करने भेजा। भयंकर रण हुआ। राठौर वीरों के शौर्य ने मुगल सेना को नाकों चने चबवा दिए। किन्तु मुगलों की विशाल वाहिनी पर वे विजय न पा सके। अब सम्राट् अकबर का सिवाना दुर्ग पर अधिकार हो गया। किन्तु राव चन्द्रसेन वहाँ से निकलकर सकुशल डूंगरपुर और बाँसवाड़ा की ओर चले गए। मेवाड़ में पहुँचकर भी राव चन्द्रसेन मारवाड़ के घटनाक्रम से निर्लिप्त न हुए।

आपको मारवाड़ से सन्देश प्राप्त हुआ कि जनता को आतंक और अत्याचार का शिकार बनाया जा रहा है। मुगलों के इस आतंक का समाचार सुनते ही राव चन्द्रसेन ने मारवाड़ की धरा की ओर प्रस्थान कर दिया। वे उन्होंने (वि० सं० १६३६) सर्वप्रथम मारवाड़ के बादशाही थाने को अपना लक्ष्य बनाया और वहाँ के थानेदार को यमलोक पहुँचाया। तदुपरान्त आप वीर राजपूतों को साथ लेकर सोजत पहुँचे और वहाँ अपनी विजय पताका फहरा दी।

राव चन्द्रसेन जीवन की अन्तिम घड़ी तक मुगल राजसत्ता से संघर्षरत रहे। उन्होंने मारवाड़ की मानमर्यादा को अक्षुण रखने के लिए राजसी सुख वैभव को ठुकराकर कटंकाकीर्ण पथ का वरण किया। वि० सं० १६२७ माघ सुदी सप्तमी (११ जनवरी १५८१ ई०) को मारवाड़ का यह स्वातन्त्र्य दूत अपनी नश्वर काया को त्याग चिरनिद्रा में सो गया किन्तु अपने बलिदान से देश भक्तों को सतत जाग्रत रहने का सन्देश भी दे गया।

□

शंकर वह निराला था।

♦♦♦

सत्य, धर्म का मर्म समझकर,
जिसने ज्योति जगाई थी।
स्वतंत्रता की प्रथम किरण भी,
भारत में उमगाई थी।

जिसने की स्वीकार चुनौती,
पाखण्डों का कर खण्डन।
श्रद्धा सुमन हृदय के मेरे,
हैं उस मुनिवर को अर्पण।
मूल राष्ट्र की पीड़ाओं का,
जिसने खोज निकाला था।
युग का गरल पचाने वाला,
शंकर वही निराला था।

उसने दृढ़ संकल्प धार कर,
छेड़ दिया था नव अभियान।
गूंज रहे हैं अब तक जग में,
उस महर्षि के ही जयगान॥
सुनकर उसका गर्जन तर्जन,
काँप उठे थे अन्यायी।
पर जो भी जिज्ञासुजन थे,
उन्हें मिली निर्विसु खदायी॥

आर्यजाति को जीवन देने का,
व्रत जिसने धारा था।
और अधर्मीजन के हित तो,
जिनका तर्क कुठारा था।
हिमगिरि के उतुंग शिखर से,
सागर तक गूंजा सन्देश।
आर्य दासता कभी न सहता,
देते रहे यही आदेश॥

और तुम्हारे मन्त्रदान से,
जगी देश में क्रान्ति महान्।
आओ हम सब मिलकर गाएं,
उसी देवता का गुणगान।
दे हमको वह शक्ति प्रभु,
हम करें तुम्हारा अनुशीलन।
सत्य धर्म के लिए समर्पण,
हो अपना यह तन मन धन॥

—वचनेश

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—दिग्दर्शनानन्द

ढोल की पोल

'आजकल तो पौ बारह हैं सदानन्द ! चतुर्दिक है आनन्द ही आनन्द। सुना है खूब मौज उड़ा रहे हो। सवेरे शाम हलवा मांडे उड़ा रहे हो। कितने ही विवाह संस्कार एक एक दिन में करा रहे हो। सुना है दक्षिणा भी खूब पा रहे हो।'

सो तो ठीक है जिज्ञासानन्द जी ! किन्तु कुछ मामला ढीला है। खाने पीने का तो दोनों समय का खूब वसीला है। किन्तु अब दान दहेज पर तो गिरी है गाज। इस लिए कुछ हाल बेहाल सा है जनाब। क्योंकि दहेज विरोधी प्रतिबंध हो गए हैं कड़े। इसलिए हमारे बढ़े हैं कुछ दुखड़े। क्योंकि लोग नकदी नहीं दे पा रहे हैं, इसलिए हमारे पल्ले भी दक्षिणा के टके कुछ कम ही आरहे हैं।

'फिर भी भइया आपकी है तो पाँचों घी में हैं।'

'सो तो हैं। किन्तु फिर मन मारना पड़ रहा है। डगमगाती हुई नैया को संवारना पड़ रहा है।' बोले सदानन्द।

'अरे भइया किन्तु तुम तो स्वयं दहेज के विरुद्ध भाषण करते रहो हो। अब तो शासन ने सही पग ही उठाया है। इसमें भी है तुम्हें परेशानी। क्या चार टकों की खातिर ही है आन-बान-शान गंवानी। पैसा ही तो सब कुछ नहीं। तुम्हारे दिमाग में परमात्मा ने बुद्धि दी है। तुम्हारे गुरु का काम पूरा हो रहा है और तुम हो रहे दुखी। जिज्ञासानन्द बोले।

अच्छा भाई हम मन को समझा लेंगे। आपकी बात हमारे मन को लग गई है। अब हम जो भी कोई संस्कार करायेंगे उसमें सादगी ही निभायेंगे। आज सदानन्द तनिक प्रफुल्लित थे और जिज्ञासानन्द के पास पधारे। बोले आज हमारे साथ चलिए। हमें एक नामकरण संस्कार कराना है। तनिक देखिए हम कितने शुद्ध ढंग से कराते हैं।

जिज्ञासानन्द जी भी साथ हो लिए। पहुँचे यजमान जी के निवासस्थान पर। सभी आयोजन भली-भाँति सुसंपन्न हुआ। और अब आई प्रसाद वितरण की वेला। इससे पूर्व सदानन्द जी प्रशंसा कर रहे थे कि यह मेरी एक मास की पुण्याई है। देखिए परिवार में कितनी शालीनता ला दी है। उन्हें धर्म का सही मर्म और व्याख्या समझा दी है। अभी सदानन्द यह भाषण झाड़ ही रहे थे कि रिकार्ड बज उठा' जहाँ बजती है शहनाई वहाँ मातम भी होता है।'

जिज्ञासानन्द बोले 'सदानन्द जी हो गया न बंटाधार। यही किया कराया है चमत्कार। यही है आपका अनन्त उपकार।

'सदानन्द बोले' क्या बताया जाए। हो गई है कुछ गड़बड़ी। टूट गई हमारी प्रतिमा जो हमने थी घड़ी। आगे जहाँ कहीं भी शुभ कार्य कराओगे आप ऐसी शिकायत न कर पाएंगे।

□ □

आज हर्षोत्फुल्ल होकर सदानन्द जी पुनः जिज्ञासानन्द जी के पास पधारे। उन्हें देखते ही जिज्ञासानन्द बोले 'धन्य भाग्य हैं हमारे। जो दर्शन हुए तुम्हारे। इस बार तो पूरे चार मास बाद आ रहे हो। कहाँ रम रहे थे। कौन से थान पर जम रहे थे।'

'सदानन्द बोले' अजी आपको क्या बताऊँ। मैंने कई मास लगाए हैं। पूरे नगर के नगर को ही आदर्श बना दिया है। एक-एक को सादगी शालीनता का पाठ पढ़ा दिया है। अब आप देखिएगा कि मैं विवाह संस्कार जिस-जिस परिवार में कराता हूँ उसमें कितना विशुद्ध और धार्मिक व्यवहार करता हुँ।

'अच्छा भइया। अब देखेंगे आपके परिश्रम का प्रतिफल। हमें चले, चलते हैं। आज कोई खास काम भी नहीं फिर तुम्हारे द्वारा सुधारे गए घरों का भी तनिक अनुभव हो जाएगा।

और फिर दोनों मित्र अपरान्ह एक गृहस्थ के घर पर पहुँच गए। जहाँ विवाह संस्कार होना था। उनकी बड़ी अगवानी हुई। 'पुरोहित जी समय पर पधारे, आपकी बड़ी महरवानी हुई, कहते हुए करबद्ध उनका परिवार के प्रमुख ने स्वागत किया।

सदानन्द जी ने मंडप स्वागत सत्कार सभी के बारे में बड़े रौबीले स्वर में आदेश निर्देश दिए। तभी परिवार का एक युवक बोला पंडित जी बारात के आने पर रिकार्ड वगैरह तो बजेंगे ही। आप ही बताइये कि कौन सा रिकार्ड बजाया जाए।

सदानन्द विरुदावली से फूल कर कुप्पा हो गए और बोले तो हो जाए कोई सामाजिक गान। आप आखिर हमारे शिष्य हैं, महीनों से हम आपको ज्ञान दे रहे हैं कोई उपयुक्त गीत बजवाइए।

और कुछ ही क्षण बाद जब बारात द्वार पर आई तो रिकार्ड बजा 'आंधियाँ गम की यों चली बाग उजड़कर रह गया।'

शेष पृष्ठ ३२ पर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

• चोरी रोकने हेतु ताला

• धान की भूसी से सीमेन्ट

• पेड़ पौधों में अनुभूति

आपकी कार चोरी तो हो सकती है, परन्तु गुम कदापि न हो सकेगी । यह आश्वासन दिया है न्यूयार्क की एक फर्म ने। उस फर्म का दावा है कि उसने १२ ऐसी युक्ति का आविष्कार किया है कि चोरी हो जाने के पश्चात् भी उसके वापस मिलने की संभावना बढ़ जाती है।

वह आविष्कार है एक ऐसे ताले का कि जो पैट्रोल की टंकी से पैट्रोल के बहाव को रोकने के लिए एक छोटे से स्विच के समान गोपनीय ढंग से लगा रहता है। इसे दबाकर बन्द कर दिए जाने पर टंकी से पैट्रोल का बहाव रुक जाता है। जो व्यक्ति इस युक्ति से अनभिज्ञ है वह यदि कार को चुरा भी ले जाता है तो अधिक दूर तक नहीं जा पाता। उसे कार छोड़ कर ही जाना पड़ता है, और ऐसा करते समय वह पकड़ में आ भी सकता है। इस तकनीक का उपयोग कार में इस युक्ति को कहीं भी लगाकर गोपनीय बनाया जा सकता है।

× × ×

धान की भूसी का अब एक लाभकारी उपयोग सीमेन्ट बनाने के लिए भी हुआ है ! सीमेन्ट बनाने की इस नई विधि के आविष्काक हैं कैलिफोनिया विश्वविद्यालय के एक भारतीय सिविल इन्जीनियर प्रो० बी० के० मेहता।

इस विधि द्वारा सस्ते और अच्छे सीमेन्ट का निर्माण संभव है। इससे सीमेन्ट की कमी वाले देश तो लाभान्वित होंगे ही साथ ही धान की भूसी को जलाकर नष्ट करने की व्यवस्था भी समाप्त हो सकेगी। यह भी उल्लेखनीय है कि धान की भूसी को जलाए जाने से उत्पन्न वायुदूषण फेफड़ों में सिलिकोसिस शरीर में घातक रोग को उत्पन्न करने में सहायक हो सकता है !

प्रो० मेहता का दावा है कि भारत में ही चावल की भूसी से लगभग २० लाख टन सीमेन्ट प्रतिवर्ष तैयार हो सकेगा।

यह सन् १९७२ के आंकड़ों के अनुसार देश में उत्पादित कुल सीमेन्ट का अधिक भाग बैठता है। उनका यह भी मत है कि भूसी में सीमेन्ट बनाने के कारखाने पर १००,००० डालर की लागत आएगी ! जबकि प्रचलित सीमेन्ट कारखाने पर लागत का अनुमान ५०,००० लाख डालर है ।

× × ×

झूठ बोलते समय शरीर के अंदर जो तनाव उत्पन होता है उसे मापने वाले यंत्र के विशेषज्ञ श्री क्लीव बैरस्टर ने कुछ वर्ष पूर्व यह मत व्यक्त किया था कि जब किसी पेड़ पौधे के पत्ते कांपते हैं तो शायद वे अपने भय को ही व्यक्त करते हैं। उनकी धारणा है कि पेड़ पौधों में भी भावोद्वेग होता है। उनमें स्मृति भी होती है और संभवतः उनमें लोगों के विचारों को जानने की भी क्षमता होती है। इस बात की पुष्टि उन्होंने पुष्प वाले १२ पौधों के पत्तों के साथ भावोद्वेग मापक विशेष यंत्र लगाकर की है। पौधों की जड़ों में पानी डालने के बाद उसकी जो प्रतिक्रिया यंत्र ने प्रस्तुत की उसका नमूना उत्तेजित व्यक्ति के शरीर में होने वाली प्रतिक्रिया से मिलता जुलता था। यह जानने के लिए कि क्या आघात के खतरे से भी पौधों में कोई प्रतिक्रिया होती है, श्री बैरस्टर ने एक पत्ता जलाने का निश्चय किया और उनका कथन है कि ज्योंही यह विचार उनके मन में आया यंत्र में दर्ज करने वाली कलम लेखचित्र से भी आगे निकल गयी।

अधिक से अधिक व्यक्तियों

तक वेद का सन्देश पहुंचाएं

संसार में सत्य-धर्म-ज्ञान का सन्देश
फैलाने के लिए
दयानन्द संस्थान द्वारा प्रकाशित
जन-ज्ञान (साप्ताहिक) के सदस्य बनाइए

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आयुर्वेद में दाँत उखाड़ने की विद्या

श्री कमलाकान्त आयुर्वेदाचार्य, बी. आई. एम. एस.

'आल इन्डिया आयुर्वेदिक डेन्टल मिशन' के संस्थापक वैद्यराज श्री किशोरीदास जी लखनऊ में आयुर्वेदिक दंतयज्ञ का संचालन कर रहे थे। लगाने अथवा खिलाने की औषधि का प्रयोग किये बिना ही मजबूत या हिलते हुए दाँत बिना किसी तकलीफ़ के वैद्यराज टुथफोरसेप्स से तीन-चार सेकिंड के भीतर ही निकालते जा रहे थे। एक ही समय में एक व्यक्ति ने तो आठ दाँत निकलवाये। अकस्मात् उसी समय, जब वैद्यराजजी का दंतयज्ञ चल रहा था, मेडिकल कालिज के डेन्टल सर्जन डा० एच० डी० गुप्ता दर्शकों के रूप में जा पहुँचे। ११ जून ५३ की यह घटना है। गुप्ताजी ने वहाँ जो कुछ देखा उससे उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। यंत्र-शस्त्र स्टैरिलाइज्ड—जीवाणु-रहित—कराने के बाद डा० गुप्ता ने परीक्षार्थ एक व्यक्ति का मजबूत दांत उखड़वाया। इसके बाद मेडिकल कालिज के एक छात्र ने परीक्षार्थ अपनी ऊपर की दाहिनी ओर की मजबूत दाढ़ निकलवा डाली। छात्र ने कहा: 'दर्द बिलकुल नहीं हुआ।'

आश्चर्य में डूबे डा० गुप्ता ने पूछा, "आप मेस्मेरिज्म का प्रयोग तो नहीं करते ?"

वैद्यजी ने कहा: "रंचमात्र नहीं। दो वर्ष का हमारा कोर्स है। इसे पढ़कर तथा क्रियात्मक ज्ञान प्राप्त कर प्रत्येक छात्र मेरी तरह दांत निकाल सकता है। हमें अपने ज्ञान के अटूट भण्डार से लाभ अवश्य उठाना चाहिए।"

काफी समय तक वार्तालाप करने के बाद डा० गुप्ता ने कहा: "हम आपकी राय से सहमत हैं।"

यहाँ हम केवल दांत उखाड़ने के आयुर्वेदिक प्रकारों पर ही शास्त्र सम्मत विचार करके हानि लाभ पर दृष्टि-पात करेंगे।

आयुर्वेद का चिकित्सा सूत्र सतत तथा गहन विचार-धारा का प्रतीक है। सुश्रुत ने लिखा है :

यात्युद्वीर्णं शमयति व्याधिं नान्यमुदीरयेत्,
सा क्रिया न तु या व्याधिं हरत्यन्यमुदीरयेत्।

जो उत्पन्न व्याधि को दूर करे तथा अन्य व्याधि को उत्पन्न न करे वह चिकित्सा है। आयुर्वेद के मतानुसार रोग या रोगी के कष्टों का शमन कर लेने मात्र से चिकित्सा में पूर्णता सिद्ध नहीं होती। एक विकार दूर होकर दूसरे को पैदा कर दे उसे आयुर्वेद विशेषज्ञ चिकित्सा नहीं मानते।

दाँत उखाड़ने में यदि आंख, कान, पाचन-संस्थान, हृदय आदि की विकृति अथवा पूयदोष (Septic) उत्पन्न होने का भय लगा रहे तो यह निश्चित है कि उस प्रणाली में कोई न कोई दोष अवश्य है।

आयुर्वेद के दंत विशारदों ने योगशास्त्र में बताई गई दंतोत्पादन-विधि को भली-भांति समझने के बाद अपनाया है।

योग की प्राचीन पुस्तकों में एक 'हठयोग प्रदीपिका' है, जिसमें अनेक बंधों के साथ 'जालंधर बंध' का वर्णन है। वैद्यराज श्री किशोरदासजी इसी बंध के द्वारा सर्व-प्रथम दाँत उखड़वाने वाले व्यक्ति के स्नायविक मंडल—नर्वस सिस्टम—को नियंत्रित करते हैं। इसी बंध के कारण दाँत उखाड़ते समय आँख, कान, आमाशय इत्यादि का कोई भी विकार होने का किंचित् मात्र भी भय नहीं रहता है। यह बंध केवल दाँत उखाड़ने के लिए ही योगियों ने नहीं लिखा है अपितु इसके अनेक प्रत्यक्ष लाभ हैं। नीचे के तीन श्लोकों में जालंधर बंध का सुन्दर वर्णन है :

कंठमाकुंच्य हृदये स्थापयेच्चिबुकं दृढ़म्।
बंध्यो जालंधराख्योऽयं जरामृत्युविनाशकः।

कंठ या स्वरयंत्र को हृदय की ओर संकुचित करके अर्थात् अन्दर की ओर दबाकर चिबुक—ठोढी—को कंठ पर दृढ़ता से स्थापित करे। यही जालंधर बंध कहलाता है। श्वास रोकने पर कुंभक प्राणायाम के साथ क्रिया बिल्कुल ठीक रूप में होती है।

बध्नाति हि शिराजालमधोगामि नभोजलम्
ततो जालंधरो बन्ध्यः कण्ठदुःखौघनाशनः।

क्योंकि यह बंध शिरा—वेन्स—जाल को बाँधता है और नीचे जाने वाले मस्तिष्क के कफांश को बाँधता है। अतः इसे जालंधर बंध कहते हैं। आयुर्वेदिक मत से बंध का यहाँ क्या अर्थ है उसे हम देखें। वात-बंध, पित्त-बंध, कफ-बंध इस प्रकार तीन बंध माने गये हैं। शिराओं द्वारा नीचे से ऊपर जाने वाले पित्तात्मक दोषों को रोक देना पित्त बंध कहलाता है। यह पित्त चाहे यहाँ दोष रूप हो या धातु रूप सब रुक जायेगा। ऊपर से नीचे पतित होने वाले कफात्मक पदार्थों को रोक देना कफ बंध कहलाता है। धमनियों—आर्टरीज—द्वारा नीचे दोषों के प्रवाह रोक देने को साधारणतः कफ-बंध कह सकते हैं।

वात-बंध सबसे विचित्र हैं। कंठास्थि (क्लैविकल) के ऊपर के संपूर्णभाग को अर्थात् ग्रीवा तथा मस्तिष्क के स्ना-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यविक मंडल में विद्युत् का जो प्रवाह बहता है उसे रोक देना वातबंध कहाता है।

दृष्टि नाड़ी—कोष्टिक नर्व—में जो कफांश रहता है नवीन पद्धति से दांत उखाड़ने में वह नीचे झटके के साथ आते ही व्यक्ति अंधा हो जाता है या कम आने से दृष्टि-दोष उत्पन्न हो जाता है। यह कफांश भी नभोजलम् का एक अंश है।

जालंधरे कृते बंधे कण्ठ संकोच लक्षणे।
न पीयूषं पतत्यग्नो न च वायुः प्रकुप्यति

उत्तमांग (कंठास्थि के ऊपर के अंग) में विशुद्धाख्य चक्र के जो अंग हैं उनपर इस जालंधर-बंध का प्रभाव पड़ता है। वात, पित्त, कफ़वाही नाड़ी अर्थात् स्नायविक शिरा व धमनी के विभिन्न जालों का बांधना जालंधर-बंध का एक कार्य है।

किन्तु दाँत निकालने की नवीन प्रणाली में स्थानीय कष्ट निवारण की व्यवस्था तो की जाती है; किन्तु दांत निकालते समय आंख, कान, हृदय आदि को घातक प्रभावों से बचाने की कोई व्यवस्था नहीं की जाती। अतः उपर्युक्त उपद्रव उत्पन्न होने की संभावना बनी रहती है।

आयुर्वेदिक पद्धति से दाँत निकालने में केवल जालंधर बंध का ही प्रयोग नहीं किया जाता; बल्कि हर दाँत के लिए एक विशेष कोण पर विशेष झटका अपेक्षित होता है। यह विषय भी अभ्यासगम्य है। ★

(पृष्ठ २६ का शेष)

बस एक पंक्ति ही कान में पड़ी तो जिज्ञासानन्द भल्ला उठे' बस-बस देख लिया तुम्हारी शिक्षा दीक्षा का चमत्कार। भइया हम पर तो हो गया आपका अनन्त उपकार।

सदानन्द ने घिघियाते हुये कहा 'अरे ठहरिये! ठहरिये। अभी सबको ठीक किये देता हूँ। अब ऐसी कोई गलती नहीं होगी। सबको डाटता फटकारता हूँ। एक बार गलती हो गई। अब दोबारा नहीं हो पाएगी।'

अब आप विदाई तक तो ठहरिए। समझाए दे रहा हूँ। और फिर सदानन्द ने कुछ देर के लिए भीतर गए और प्रसन्न मुद्रा में मुस्कराते हुए आए और बोलते गए। कुंडी खोलने गए। अब कोई भूल नहीं करेगा।

जिज्ञासानन्द मन मार कर बैठ गए। और ज्यों त्यों कर समय काटा और अन्ततः आई विदाई की बेला।

उधर वधु की विदाई होने लगी और इधर फिर रिकार्ड बज उठा 'हम आज अपनी मौत का सामान ले चले।'

जिज्ञासानन्द से अब न सहा गया और बोले भइया सदानन्द! बस अब अति हो गई। तुम्हारे इस आदर्श प्रचार प्रसार को देखकर हमारी जीते जी ही गति हो गई।

'अजी जिज्ञासानन्द जी ठहरिए! ठहरिए।'

और फिर जिज्ञासानन्द चलते-चलते बोले, जैसे गुरू वैसे ही चेले। भइया तुम्हारा दोष नहीं। तुम ठहरे धन माया के चार मंजिले के वासी। तुम्हें तो नारे ही लगाने हैं और झाड़ने हैं उपदेश। आचरण और कथन। इनमें समानता है तनिक कठिन सा जतन। अच्छा मैं चला। ●

गीदड़ और हाथी

गीदड़ जंगल में सभी मरे हुए जानवरों को खा चुके थे और अब उनके खाने के लिये कुछ नहीं बचा था। तब उनमें से सबसे बूढ़े गीदड़ ने खाने का प्रबंध करने का एक तरीका सोचा।

वह हाथी के पास गया और कहने लगा—'हमारा एक राजा था, जो बिगड़ गया था। वह हमें ऐसे-ऐसे काम करने को कहता था, जिन्हें करना असंभव होता था। हमने उसे निकाल दिया। अब हम नया राजा चुनना चाहते हैं। मैं आपके पास अपनी बिरादरी की ओर से प्रार्थना करने आया हूं कि आप हमारे राजा बनना स्वीकार करें। हम बहुत भले ढंग से रहते हैं। आप हमें जो भी करने को कहेंगे, हम करेंगे और आपकी हर तरह से इज्जत करेंगे। आइये, हमारे राज्य में चलिये।'

हाथी मान गया और गीदड़ के साथ चल पड़ा। गीदड़ उसे दलदली इलाके में ले गया। हाथी दलदल में धंसने लगा, तो गीदड़ ने कहा—'अब हुक्म कीजिये कि आप क्या चाहते हैं, हम उसे पूरा करेंगे।'

हाथी ने कहा—'मैं हुक्म देता हूं कि मुझे खींचकर यहाँ से निकालो।'

गीदड़ हंसा और कहने लगा—'मेरी पूंछ पकड़ लो। मैं इसी समय तुम्हें खींचकर बाहर निकाल दूंगा।'

'भला तुम अपनी पूंछ से मुझे खींच सकोगे?' हाथी ने कहा।

'तो फिर ऐसी बात करने को क्यों कहते हो, जो हमारे लिए असंभव है? हमने पिछले राजा को भी इसी-लिए निकाल दिया था कि वह हमें असंभव काम करने को कहता था।'

आखिर हाथी दलदल में धंसा हुआ ही मर गया। तब गीदड़ वहां आये और उसे खाकर अपना पेट भरने लगे।

—तालस्ताय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

महर्षि का अधूरा स्वप्न

जो प्रथम शताब्दी में साकार न हो सका

एक ज्वलन्त प्रश्न : जो उत्तर के लिए आप की बाट देख रहा है

(प्रश्न उभरा है कि आर्य समाज का भावी कार्यक्रम क्या हो? कई सूत्री योजनाओं के चित्र उभर रहे हैं। किन्तु महर्षि का वह स्वप्न जो प्रथम शताब्दी में पूरा न हो सका? प्रस्तुत लेख में पढ़िए।)

क्या हमें पहले उसे साकार करने की आवश्यकता नहीं?

—सम्पादक

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये पुरुषार्थ चतुष्टय प्रत्येक पुरुष के लिए आवश्यक हैं। यही जीवन की चार सूत्री योजना है। एक श्रेष्ठ समाज के सामने जो भी योजनाएँ प्रस्तुत होती हैं उनका मापक-यंत्र यही चार सूत्र हैं। इसके बिना न तो व्यक्ति की जीवन यात्रा पूरी हो सकती है और न समाज ही सर्वांगीण उन्नति कर सकता है।

इन चारों पुरुषार्थों की भिन्न-भिन्न व्याख्यायें विद्वानों के द्वारा प्रस्तुत की जाती रही हैं। कुछ लोग धर्म को महत्व देकर उसे अर्थ और काम का विशेषण बना देते हैं। उनका कथन होता है कि—धर्मपूर्वक अर्थ और धर्मपूर्वक काम होना चाहिए। यदि धर्म विशेषण है और धर्म का अपना कोई पृथक् अस्तित्व ही नहीं है तो फिर पुरुषार्थ चतुष्टय कैसा? इन चारों का अपना-अपना स्वतंत्र अस्तित्व है।

वास्तव में मनुष्य का जो साध्य होता है उसकी सिद्धि के लिए साधनों की आवश्यकता होती है। महर्षि ने संध्या के अन्त में जप उपासना कर्म से इन चारों की सिद्धि की कामना की है अर्थात् ये चारों पुरुषार्थ साध्यकोटी के हैं। फिर भी साध्य भी एक स्थिति में साधन बनता है जैसे प्रभु हमारे लिए साध्य है पर प्रभु भी आनन्द प्राप्ति के साधन कहाते हैं।

ठीक इसी प्रकार धर्म और अर्थ ये हमारे दो साधन हैं और काम और मोक्ष ये दो साध्य कोटि के पुरुषार्थ हैं।

धर्म विशुद्ध रूप में उन मानवीय गुणों का नाम है जिन्हें धारण कर मनुष्य सुखी बन सकता है। इसीलिए महाभारत का कथन है—

'धारणाद्धर्ममित्याहु'

अर्थात् धर्म उन गुणों को कहेंगे जिससे चेतन शक्ति अलंकृत होती है। इन गुणों का सम्बन्ध जड़ जगत् से सर्वथा दूर रहता है। किन्तु आत्मा केवल अपने सद्गुणों से ही जीवन यात्रा पूरी नहीं कर सकता। उसका जड़ जगत् से भी एक अविच्छिन्न सम्बन्ध होता है।

जड़ जगत् से वह जितने साधन अपने सुख के लिए जुटा पाता है इन्हीं साधनों को हम अर्थ कह सकते हैं।

इस प्रकार वे मानवीय गुण जिन्हें आत्मा धारण करता है धर्म कहाते हैं और वे सब भौतिक पदार्थ जो हमारे जीवन पाथेय बन कर हमें आगे बढ़ाने में सहायक बनते हैं वे अर्थ कहाते हैं।

आर्यसमाज की स्थापना केवल पारलौकिक सुख प्राप्त कराने के उद्देश्य से ही नहीं की गई। अपितु वह पारलौकिकता से भी अधिक विश्व में एक सुखी समाज बनाने के उद्देश्य से स्थापित किया गया है।

यह ठीक है कि हमारे आत्मिक गुण गुणी के साथ सदा वर्तमान रहते हैं जबकि जड़ जगत् के साधन सीमित रूप में ही गुणी का साथ देते हैं। इसलिए धर्म को व्यापक महत्व दिया गया है और अर्थ गौण बन गया है।

किन्तु संसार में या मानव जीवन की इस भौतिक यात्रा में अर्थ का महत्व बहुत अधिक है। यहाँ तक कि कल्पनाकारों ने स्पष्ट घोषित कर दिया है कि—"सर्वेगुणाः कांचनमाश्रयन्ति।"

यह युक्ति यथार्थ की कसौटी पर भी खरी उतरती है। साधन सम्पन्न व्यक्ति कहीं अधिक प्रशंसित होता है एक सद्गुणी साधनहीन व्यक्ति से।

इसलिये धर्म और अर्थ दोनों का पारस्परिक गहरा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

सम्बन्ध है। धर्म के [illegible] धर्म परस्पर अधूरे ही कहे जाएंगे।

इसी प्रकार काम और मोक्ष का भी परस्पर चोली दामन का सा साथ है। भौतिक कामनाएँ ही हमें धीरे-धीरे उस अक्षुण्ण आनन्द की ओर प्रेरित करती हैं।

इसलिये वैशेषिककार ने कहा है कि—

"यतो अभ्युदय निश्रेयस सिद्धिः सधर्मः।"

जिससे अभ्युदय और निश्रेयस् की सिद्धि हो उसे हम धर्म कहेंगे। कदाचित इसका अर्थ यह कभी भी नहीं होगा कि केवल धर्म ही इहलौकिक और पारलौकिक सुख का कारण है अन्य नहीं। इसमें लौकिक सुखों की प्राप्ति में अर्थ और काम का भी बहुत महत्व है। काम तो मोक्ष सुख में भी सहायक बनता है क्योंकि बिना कामना के तो मोक्ष फल भी दुर्लभ है।

इसलिये यह मानना ही उचित है कि वैशेषिककार के धर्म में अर्थ, काम और मोक्ष भी सम्मिलित हैं क्योंकि वैशेषिककार का यह धर्म यदि अर्थ और काम से भिन्न है तो वह कम से कम अभ्युदय प्राप्ति का साधन नहीं बन सकता। क्योंकि अर्थ के बिना "अभ्युदय" भौतिक सुख का कारण नहीं बन सकता।

इस विश्लेषण से हमें आर्यसमाज में एक अभाव के दर्शन होते हैं आर्यसमाज केवल आध्यात्मिक गुणों के प्रसार का व मोक्ष प्राप्ति का संदेशवाहक मात्र बनकर रह गया है।

जबकि आज का युग अर्थ को प्रधानता प्रदान करता है। जब मनुष्य के पेट की भूख केवल सिद्धांतों और आदर्शों से मिट नहीं पाती तब वह ऐसे तथाकथित धर्मों का अवलम्बन लेता है जहाँ उसकी भौतिक क्षुधा भी तृप्त होती है।

आर्यसमाज एक आन्दोलन है या आर्यसमाज एक संस्था है। दोनों ही व्याख्याएं आर्यसमाज के या तो निराकार रूप को प्रस्तुत करती हैं या फिर संस्था के रूप में उसके केवल साकार स्वरूप को। आज के आर्यसमाज में पृथक्-पृथक् रूप में ये दोनों ही रूप हमें दिखाई देते हैं, पर वास्तव में आर्यसमाज जीवन की एक ऐसी योजना है जो मनुष्य को भौतिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के ऐश्वर्य को प्राप्त कराती है।

क्या आज का आर्य समाज इस कसौटी पर खरा उतर सकता है? इसका स्पष्ट उत्तर होगा-नहीं।

एक नवयुवक आर्यसमाज में आकर अपने लिए रोजगार खोजता है क्योंकि पहले वह अपना पेट भरेगा तब कहीं 'वैदिक धर्म की जय' कह सकेगा। क्या आर्यसमाज के पास कोई ऐसी योजना है? इसका उत्तर भी सिवाय नहीं के और कुछ नहीं। फिर क्या यह आर्यसमाज की [illegible] जीवन पद्धति मनुष्य के पेट की भूख मिटाने का साधन नहीं जुटा सकती वह पद्धति मोक्ष तक कैसे पहुँचा सकेगी। यह एक प्रश्न भी है और एक चुनौती भी।

हमने एक शताब्दी पूरी कर ली है पर हमारे पास केवल धर्म और मोक्ष की चर्चा होती है। अर्थ और काम की सिद्धि कौन करेगा? यही हमारी कमजोरी है जिसके कारण दूसरे झूठे सम्प्रदाय तेजी से बढ़ रहे हैं और हम सच्चे अर्थों में दुर्बल और कमजोर होते चले जा रहे हैं।

क्या कहीं महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इस दिशा में हमें कोई निर्देश नहीं दिया। महर्षि दूर-द्रष्टा थे उन्होंने एक साथ दो संस्थाओं को जन्म दिया था। उनकी ये दो समानान्तर योजनाएँ थीं। एक आर्य समाज और दूसरी थी गोकृष्यादिरक्षिणी सभा।

हमने उनकी एक सन्तान को तो प्यार दिया पर उनकी दूसरी सन्तान का पालन-पोषण करना हम भूल गये। परिणाम कोरे धर्म और मोक्ष की बात सुनने हमारे साप्ताहिक सत्संगों में कितने प्रतिशत लोग आते हैं?

जबकि चर्चों और मस्जिदों में भारी भीड़ देखी जा सकती है। एक ओर अर्थ प्रधान सम्प्रदाय अधर्म की राह पर बढ़ रहा है तो दूसरी ओर अर्थहीन धर्म अनर्थकारी सिद्ध हो रहा है।

महर्षि ने अर्थ और काम की सिद्धि के लिए जिस गोकृष्यादि रक्षिणी सभा की योजना प्रस्तुत की थी वह योजना एकदम समाजवादी योजना है। समय रहते ही कहीं वह आर्यों के द्वारा क्रियान्वित होती तो मार्क्स और लेनिन भी आ कर आर्यसमाज के चरणों में अपना मस्तक नवाते। महर्षि ने जहाँ आर्यसमाज में कठोर जीवन की मर्यादाएँ बाँधी वहाँ उनकी गोकृष्यादि रक्षिणी सभा की सहकारी समाजवादी योजना आर्थिक विकास की एक धर्म प्रधान सशक्त योजना है। यदि आज भी हम सुदूर गाँवों में इन सहकारी संस्थाओं की स्थापनाएं करें तो आर्यसमाज को अनर्थकारी मार्ग से उबार कर इसे अर्थकारी धर्म प्रधान योजना के रूप में फैलाया जा सकता है।

इस योजना से हम सारे विश्व पर अपना क्रियात्मक प्रभाव डाल सकते हैं। सारी राजनीतिक संस्थाओं को हम अपने इंगित पर बना और मिटा सकते हैं। प्रथम शताब्दी के कगार पर खड़े हो कर लक्षयहीन अनेक सूद्री योजनाओं पर विचार करने की अपेक्षा इस योजना को क्यों न क्रियान्वित करें। जिस योजना से कृषि और गो समाज की सम्पत्ति बन सकेगी। विश्व में बढ़ रहे साम्यवाद और पूंजीवाद हमारे सामने नत मस्तक होंगे। इस सभा में "गोकृष्यादि" आदि शब्द से वाणिज्य उद्योग आदि को ग्रहण किया जा सकता है।

एक नया समाज विश्व में उभरेगा, जिसके पास धर्म, अर्थ काम और मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय होंगे तभी जाकर हम कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के आदेश को पूरा कर सकते हैं। ✱

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—पं० आनन्द प्रियजी, बड़ौदा

आर्यसमाज की उन्नति के लिए ठोस सुझाव

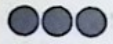

भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में मेरे सुझाव इस प्रकार हैं।

१. विविध सम्मेलनों में चोटी के विद्वान् ही बोल सकें। सब विद्वानों को समय देना कठिन है। जिन विद्वानों को अथवा व्यक्तियों को इन सम्मेलनों के विषय में कुछ मौलिक विचार रखने हों और रुचि हो, वे अपने विचार लेख बद्ध करके निश्चित तिथि के अन्दर आयोजक को भेज दें। यदि समिति को इसमें कुछ लेख उपयोगी लगें उनको सम्मेलनों से पूर्व और सम्मेलनों में बंटवा दें। इसमें कोई विशिष्ट कृति हो तो उसे सम्मेलन में बोलने का आमंत्रण दें। भाषा हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी एवं प्रान्तीय भाषा हो। चयन एक समिति करे।

२. सम्मेलनों में हम शताब्दी के लिये कार्यक्रमों को निश्चित कर सकें, यह भावना होनी चाहिये। अब हमें क्या करना चाहिये इसका निर्देश होना चाहिये। प्रस्तावों और भाषणों का यही उद्देश्य होना चाहिये।

अब भिन्न-भिन्न सम्मेलनों के संबंध में अपने विचार प्रकट कर रहा हूँ।

१. वेद सम्मेलन—वेद सम्मेलनों में आज तक हमने वेदों की महिमा सुनी और हमारे तीसरे नियम में वेद का पढ़ना-पढ़ाना प्रत्येक आर्य के लिये आवश्यक है। परन्तु आर्य गृहों में किस प्रकार वेद के प्रति रुचि हो और वेद के मंत्रों का पाठ हो और आर्य घरों के बच्चे और नर-नारी श्रद्धा और भक्ति से पढ़ने लग जायें इस पर विचार होना चाहिये। जिस प्रकार भागवत की, सत्यनारायण की कथाएं सार्वजनिक रूप में सनातनी हिन्दू समाज में होती हैं। आर्यसमाज के द्वारा इस प्रकार वेद कथाएं स्थान-स्थान पर हों ऐसा साहित्य तैयार करके इसका आयोजन करना चाहिये।

२. विश्व धर्म सम्मेलन—इस सम्मेलन में महर्षि ने जिस प्रकार दिल्ली में आकर सर्वधर्म के नेताओं को एकत्रित करके सम्मिलित रूप से धर्म प्रचार के मार्ग को ढूंढ़ने का प्रयत्न किया था, वह काम उस समय अधूरा रह गया। कारण उस समय मतपंथ सम्प्रदाय के नेता अधिक कट्टर थे। महर्षि जी के इस अधूरे कार्य को पूरा करने की चेष्टा करनी चाहिये।

३. योग सम्मेलन—योग सम्मेलन में योग की महिमा पर प्रवचन तो होंगे ही पर योग के क्षेत्र में आर्यसमाज ने क्रियात्मक रूप से गम्भीरतापूर्वक ध्यान नहीं दिया। अतः आर्यसमाज मंदिर किस प्रकार योग सिखाने के केन्द्र बनें जहाँ हठ योग, ध्यान योग, राज योगादि सिखाने का प्रबन्ध हो, इस पर विचार होना चाहिये। आर्य शिक्षण संस्थाओं में आर्य छात्र-छात्राओं को अनिवार्य रूप से इसका शिक्षण देने की व्यवस्था होनी चाहिये।

पातंजल योग सूत्र के समाधिपाद के छः सूत्रों का प्रवचन आर्यवक्ता करते हैं पर यम, नियम, आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यान की प्रक्रियाओं पर हमने कभी भी विचार नहीं किया। इस दिशा में सक्रिय कदम उठाना चाहिये।

४. आर्य सम्मेलन—इस सम्मेलन में आर्यसमाजियों को भावी कार्यक्रम की रूपरेखा मिलनी चाहिये। आर्य सम्मेलन का सम्बन्ध आर्यसमाज के संगठन के साथ है। आर्यसमाज का संगठन इस समय हमारी जन्म-मूलक जातियों में चिपके रहने के कारण तथा राजनैतिक पद्धति पर होने वाले चुनावों के कारण शिथिल हो रहा है। इन दोनों समस्याओं पर हमें गम्भीरतापूर्वक विचार करके मार्ग निकालना पड़ेगा। दूसरी शताब्दी के प्रारम्भ में प्रत्येक आर्य के लिये आवश्यक होगा कि वह इस सम्मेलन के पश्चात् यह निश्चय करके उठे कि वे अपनी संतानों का विवाह गुण कर्म स्वभाव के सिद्धांतों पर ही करेगा। कोई भी समाज का अधिकारी अपने नाम के आगे जन्मगत जाति का पुच्छल्ला नहीं लगायेगा और अपनी संतानों का विवाह आर्य सभासद् वर-वधू से ही करेगा। प्रत्येक आर्य-समाज और प्रान्तीय सभा आर्यसमाजियों की संतानों की सूचियाँ प्रकाशित करती रहेगी जिससे उन्हें अपनी संतानों के लिये वर-वधू ढूंढ़ने में सरलता हो तथा आर्यगृहों में उनका पाणिग्रहण संस्कार हो सके।

चुनाव पद्धति

हमारी चुनाव पद्धति राजनैतिक पद्धति का अनुकरण करने से बिगड़ गई है। आर्यसमाज का पदाधिकारी वही बन सके जो चुनाव के बाद समय दे सके। अपने-अपने धंधे में मशगूल व्यक्ति केवल सप्ताह में एकाध बार समाज में आये यह नहीं चल सकेगा। आर्यसमाज का पदाधिकारी सेवाभावी, चरित्रशाली होना चाहिये और सब सभासदों का प्रीतिभाजन होना चाहिये। उसको आर्यसमाज मंदिर में प्रतिदिन दो घंटे आकर निःस्वार्थ भाव से सेवा देनी चाहिये। चुनाव में राजनैतिक दलबंदियों का स्थान नहीं होना चाहिये। और चुनाव के पूर्व एक ही रात में अपने पक्ष के सभासदों की संख्या बढ़ाकर चुनाव क्षेत्र को

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कुरुक्षेत्र नहीं बनायें। चुनाव में धार्मिक भाव होने चाहिएं।

आर्य सम्मेलनों में इस बात पर भी विचार होना चाहिये कि आर्यसमाज की शिक्षण संस्थायें, विद्या आर्य सभा के आधीन हों। प्रति वर्ष आर्यसमाज के होने वाले चुनावों के कारण शिक्षण को क्षति न पहुंचे।

आर्यसमाज को हम केवल क्लबघर न बना देवें जहां सभासद् केवल व्याख्यान और भजन सुनने के लिये उपस्थित न हों। संध्या-हवन की उपस्थिति ही आर्यसमाज की उपस्थिति गिननी चाहिये। समाज के प्रधानमंत्री और गणमान्य सभासद् हवन संध्या में अनुपस्थित होते हैं और समाज के वैतनिक पुरोहित और कुछ वृद्ध, निवृत्त स्त्री-पुरुष हवन संध्या करते हैं। इस हास्यास्पद स्थिति का अंत होना चाहिये। संध्या हवन का संचालन प्रधान जी और मंत्री जी को ही करना चाहिये। सत्संगों में होने वाले प्रवचन और भजन इस प्रकार के हों जिनमें उपस्थित जनता के भक्ति भाव जागृत हों। हमने शुष्कतावाद के कारण श्रद्धा का भी नाश कर दिया है। गुरु (नाम) का नाश करते-करते हमने सच्चे गुरुओं का भी नाश कर दिया।

आज की भौतिक प्रवृत्ति से उदासीन नर-नारी समाज के सत्संग बैठने के पश्चात् शांति अनुभव करे जैसा होना चाहिये।

महर्षि जी ने अपने किसी भी ग्रंथ में कहीं भी नहीं लिखा कि स्त्री आर्यसमाजों का अलग संगठन होना चाहिये। पंजाब में जहां आर्यसमाज का व्यापक प्रचार है वहां परकीय सभ्यता के कारण पर्दाप्रथा थी अतः पंजाब के आर्यसमाजियों ने स्त्री समाज अलग बना दी। इसका परिणाम यह हुआ कि आर्यसमाज की नारियां और बच्चे "इतो भ्रष्टः ततो भ्रष्टः" हो गये। न उनकी महिलायें और बच्चे नारी समाज में जाते हैं, और ना ही पुरुष समाज में। और कुछ उत्साही आर्य महिलायें स्त्री समाज बनाती हैं। पर आर्य सभासदों की महिलायें नहीं जातीं। सनातन मंदिरों में स्त्री-पुरुष सम्मिलित रूप में जाते हैं इसलिये श्रद्धा-भक्ति कुटुंबों में बनी रहती है। आर्यसमाज ने इस पर आज तक विचार नहीं किया कि चुस्त से चुस्त आर्यसमाजी के घर में आर्यसमाज नहीं पनपता।

आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग और आर्यसमाज के मंदिर वैदिक धर्म के प्रति आकर्षण का स्थान होने चाहिएं। जिस प्रकार सनातनी बंधु मंदिरों में जाकर गीता और भागवत् के प्रवचनों से श्रद्धावान् हो जाते हैं इस प्रकार आर्यसमाज को भी चाहिये कि उनके सत्संग में आने वाले व्यक्ति वेद के प्रवचन में श्रद्धावान हो जायें।

आर्यसमाज और आर्य सभासद् परस्पर व्यवहार में कभी कोर्ट का आश्रय न लें ऐसा वातावरण होना चाहिये और समाज तो किसी भी हालत में कोर्ट में जाने की जगह न्याय समाज के पास जाय।

आर्यसमाज मंदिर सप्ताह में एक बार खुले तब सेवक स्वच्छता करे, यह अवस्था शोचनीय है। आर्यसमाज मंदिर में प्रतिदिन संध्या, प्रातःकाल हवन, योगासन और ध्यान योग का व्यवस्थित प्रबंध होना चाहिये। आर्यसमाज के स्वाध्याय खंड में स्वाध्याय का भी प्रबंध होना चाहिये। और कोई अधिक समय तक समाधि में बैठना चाहे तो उसके लिये शांतिपूर्ण जगह की भी व्यवस्था करनी चाहिये। आर्यसमाज मंदिर में किसी भी हालत में परस्पर निन्दास्तुति का वायु मण्डल नहीं होना चाहिये। यदि आर्यसमाज मंदिर में कोई शिक्षण संस्था चलती हो तो स्कूल के प्रबंधकों को चाहिये कि आर्यसमाज के मंदिर की प्रतिष्ठा नष्ट न हो इसका ध्यान रखा जाय। वैदिक विधि द्वारा होने वाले विवाह संस्कार में उपस्थित रहने वाले आर्य-समाज के मान, मर्यादा, पवित्रता का भंग न करें, इसका ध्यान रखना चाहिये।

५. महिला सम्मेलन—आर्यसमाज अधिकतर उत्सवों में महिला सम्मेलन रखता है। सम्मेलन में व्याख्यानों और प्रस्तावों के अतिरिक्त महिलाओं में आर्यसमाज का सक्रिय रूप से किस प्रकार प्रवेश हो इसका विचार करना चाहिये। आज अधिकतर रूप में जितने भी आर्य महानुभाव हैं उनके घरों की देवियां आर्यसमाज के कार्यों में रस नहीं लेतीं। प्रत्येक आर्य का कुटुंब तब ही आर्यसमाजी बनेगा जब आर्यसमाज के सिद्धांतों में उनकी महिलाएं भी दीक्षित हों। हिन्दू समाज के पर्व जिस प्रकार आम हिन्दू महिलाओं को आकृष्ट कर उनको उसमें ओतप्रोत करते हैं वैसे हमारे पर्वों का आकर्षण हमारी महिलाओं में किस प्रकार हो इसका महिला सम्मेलन में विचार करना चाहिये।

महर्षि दयानन्द के आदर्शों के विरुद्ध अलग स्त्री समाजों का निर्माण कर आर्यसमाज ने बड़ी भूल की है। प्रत्येक आर्य सभासद् की पत्नि भी उसी आर्यसमाज की सदस्या बननी चाहिये। अलग स्त्री समाज बनाने से आर्य कुटुंबों में आर्यसमाज पनप नहीं सका। कुटुम्बों सहित आर्यसमाज के सत्संग अधिक प्रभावशाली बन जायेंगे।

आर्यसमाज यज्ञोपवीत धारण करना एक आवश्यक कार्य मानता है। आर्य महिलाएं यज्ञोपवीत धारण करें और उसे निष्ठापूर्वक पहनती रहें, इसका उल्लेख महिला सम्मेलन में करना चाहिये।

आर्य महिलाओं के लिए भी कुछ ऐसे यात्रा स्थल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

निश्चित कर लेने चाहिये जिनकी वे तीर्थ समझकर यात्रा करें और सैद्धान्तिक लाभ भी प्राप्त करें।

महिलाओं और बच्चों को आकृष्ट करने के लिए कुछ मनोरंजन के निर्दोष कार्यक्रमों का भी आयोजन होना चाहिये जिसमें अपने सिद्धांतों के अनुकूल आनन्द ले सकें।

आर्यसमाज के उत्सवों के साथ आर्य मेला भी होना चाहिए जिसमें आमोद-प्रमोद के साथ महिलाओं व बच्चों का आकर्षण बढ़े।

महिलाओं के लिए कहानी, नाटिका प्रहसन, आदि का भी साहित्य प्रकाशित करना चाहिए, जिसमें आर्य-समाज का गौरव कहानी के रूप में आ जाये।

महिला प्रचारिकायें और ब्रह्मचर्य व्रत लेकर कार्य करने वाली महिलाओं का भी वर्ग उत्पन्न करना चाहिए, जिनका मान ईसाई नन्स के अनुरूप और जैन साधुओं के अनुरूप होना चाहिए। केवल भाषणों से दिग्विजय करने का युग नहीं रहा।

६. शिक्षा सम्मेलन :—आर्यसमाज ने शिक्षा केक्षेत्र में बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। सैकड़ों कालेज, हाई स्कूल और गुरुकुल इसके द्वारा संचालित हैं। गुरुकुल कांगड़ी सरकार मान्य यूनिवर्सिटी बन चुका है। अजमेर में श्री वाब्लेजी दयानन्द यूनिवर्सिटी बनाने का स्वप्न ले रहे हैं। पंजाब और हरयाणा के लोग नानक यूनिवर्सिटी के समान दयानन्द यूनिवर्सिटी बनाने का स्वप्न ले रहे हैं। हम भी बड़ौदा में कर्वे आर्य सांस्कृतिक महिला विद्यापीठ की स्थापना करना चाहते हैं। आर्यसमाज अपनी शिक्षण संस्थाओं के ऊपर तीन करोड़ रुपया वार्षिक खर्च करता है। परन्तु इतने विशाल रूप से कार्य करने पर भी आर्यसमाज में मिशनरी पद्धति के समान कार्य करने वाले कार्यकर्त्ताओं का अभाव है। सरकार का अनुदान लेने के कारण तथा विद्यार्थियों का आदर्श आजीविका के लिए विद्या को साधन बनाने के कारण हमें अपने महान आदर्शों से कुछ हटना पड़ा है।

महर्षि दयानन्द जी ने शैक्षणिक कार्य के लिए हमें शिक्षणशास्त्रियों की तथा विद्वानों की जो आर्य सिद्धांतों में ओत-प्रोत हो उनकी विद्या आर्य सभा बनाने का अनुरोध किया था परन्तु हमारी शिक्षण संस्थायें प्रायः आर्य-समाजों के तथा आर्य प्रतिनिधि सभाओं के आधीन हैं फलस्वरूप इन संस्थाओं के चुनाव के कारण हमारी शिक्षा संस्थाओं को भी सब कुछ सहन करना पड़ता है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण स्वामी श्रद्धानन्दजी द्वारा स्थापित गुरुकुल कांगड़ी यूनिवर्सिटी है। इसलिए आर्यसमाज की शिक्षण संस्थाएं आये दिन समाज में बदलते हुए प्रधान मण्डल के आधीन न रहें और उनका संचालन सार्वदेशिक सभा द्वारा मनोनीत विद्या आर्य सभा द्वारा हो। भले ही अर्थ की जिम्मेदारी समाजों और प्रदेश सभा के आधीन रहे।

आर्यसमाज की कन्या शिक्षण संस्थाओं को एक सूत्र में सम्बन्धित कर इसके लिए केन्द्रीय अथवा प्रान्तों के अनुसार महिला यूनिवर्सिटियों की स्थापना करनी चाहिए।

आर्यसमाज जो भी यूनिवर्सिटी बनाये, उसका संचालन कर्मठ सिद्धान्तवादी आर्यों के हाथ में होना चाहिए, जिससे किसी भी समय आर्यसमाज को क्षति हो ऐसा कार्य यूनिवर्सिटियों में न हो और विद्यार्थियों का प्रवेश भी सूझबूझ से होना चाहिए जिससे हमारे स्नातक समाज के लिए अभिशाप न बन वरदान बनें।

वर्तमान आर्यसमाज की शिक्षण संस्थाओं में भी ब्रह्मचर्य आश्रम के महत्त्व को पूरा स्थान देना चाहिए और गुरुकुल पद्धति का जितना भी हो सके व्यापक रूप से उपयोग करना चाहिए। आर्य समाज के कार्यकर्त्ताओं के लिये ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए जहाँ से संस्थाओं के आचार्य, प्रबन्धक, संरक्षक, सेवक, आर्यसंस्था को मिल सकें। वर्तमान में ऐसी एक भी आर्य संस्था नहीं है। शिक्षा सम्मेलन में उसका भी आयोजन करना चाहिए। आर्यसमाजियों की सन्तान आर्यसमाज की संस्थाओं में विद्याभ्यास के लिए आये इसका विचार शिक्षा सम्मेलन को करना चाहिए।

इस समय अंग्रेजी माध्यम के K. G. स्कूल व्यापक रूप से चल रहे हैं। आर्यसमाजियों को चाहिए कि शिक्षा सम्मेलनों द्वारा संस्कृतिनिष्ठ आर्यसमाजी बाल-मंदिर प्रत्येक गांव में खोलें और बाल मन्दिरों के लिए अंग्रेजी मोन्टेसरी हाईस्कूलों में जैसे उच्च अंग्रेजी साहित्य है इसी प्रकार उच्च साहित्य रखकर बाल मन्दिरों का जाल बिछा दें व ऐसा प्रयोग आर्य कन्या महाविद्यालय, बड़ौदा के अन्तर्गत हमारी बालवाड़ी ने किया है जो बहुत ही सफल रहा। हमारे गुरुकुलों को भी प्राचीनता की नींव पर कुछ युगानुसार परिवर्तन करने चाहिएं। आर्यसमाज के सिद्धान्तों को लक्ष्य में रखकर शैक्षणिक पुस्तकों का प्रकाशन भी सार्वदेशिक सभा अथवा परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा होना चाहिए।

आर्य संस्थाओं में व्यापक रूप से दसवीं श्रेणी तक धार्मिक शिक्षण किस प्रकार होना चाहिए, इसकी योजना और प्रकाशन हमें करना चाहिए। प्रति वर्ष आर्य सिद्धांतों के अनुसार जो शिक्षण शास्त्री कोई विशिष्ट कार्य करें अथवा पुस्तकें प्रकाशित करें उसका विशेष प्रकार से सम्मान करना चाहिए।

(शेष पृष्ठ ४० पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

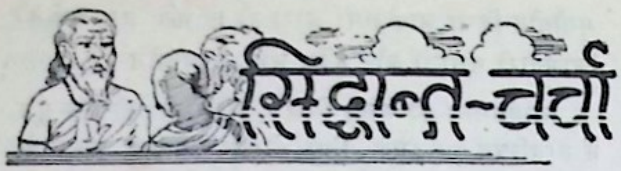

वेदार्थ की त्रिविध प्रक्रिया

आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री, एम० ए०

मासिक 'जनज्ञान'-अगस्त १९७५ के अंक में आदरणीय डाक्टर स्वामी सत्य प्रकाश जी का उपर्युक्त शीर्षक का लेख प्रकाशित हुआ है। उस लेख में कुछ बातें विचारणीय तथा प्रश्न रूप में भी प्रस्तुत की गयी हैं। उन्हीं पर इस लेख में संक्षिप्त विचार किया जाता है। (लेख में आदरणीय डाक्टर साहब को 'स्वामी जी' नाम से और महर्षि दयानन्द सरस्वती को 'महर्षि' लिखा जायेगा।)

१. "वेद के मूल शब्द यौगिक थे, अब वे योगरूढ़ बनने लगे"। स्वामी जी के इस कथन में विचारणीय यह है कि यदि वेद के सभी मूल शब्द केवल यौगिक माने जायें तो अग्नि, इन्द्र, सोम, वरुण, प्रजापति आदि का अर्थ किसी पदार्थ के लिये निश्चित न हो सकेगा। प्रायः सभी भाष्यकारों ने इन देवतावाचक शब्दों का किसी विशिष्ट पदार्थ-विषयक निश्चित अर्थ किया है—भले ही एक शब्द के अनेक अर्थ हों। इस प्रकार वेद के देवता (विषय) बोधक मूल शब्दों को केवल यौगिक न मानकर, योगरूढ़ मानना अधिक श्रेयस्कर है। तभी वेद मन्त्रों के अर्थ निश्चित हो सकते हैं। उदाहरण के लिये इन्द्र का यौगिक अर्थ हुआ—"परम ऐश्वर्यवान्"। अब प्रश्न हुआ कि वह परमैश्वर्यवान् कौन है। उसके उत्तर में जब उसको योगरूढ़ मानकर निश्चित अर्थ किया गया (१) परमात्मा, (२) जीवात्मा, (३) सूर्य, (४) विद्युत्, (५) राजा, (६) सेनापति, (७) मेघ आदि तभी मन्त्र का अर्थ निश्चित हो सका। केवल यौगिक अर्थ "परम ऐश्वर्यवान्" मानने से अर्थ अनिश्चित और सन्देहात्मक रहेगा।

२. "महर्षि ने 'चत्वारि वाक् परिमिता पदानि ऋग् १-१६४-४५) आदि मन्त्र का अर्थ करते हुए नैरुक्तिक मत का ही एक मात्र उल्लेख किया है, अर्थात् नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात का। श्रुति में ऐसे वर्गीकरण कुछ अस्वाभाविक प्रतीत होते हैं।"—स्वामी जी का यह कथन विचारणीय है। जब वेद मन्त्र में चार पदों का उल्लेख है तो महर्षि ने यास्क और पंतजलि के वैयाकरण मतानुसार चार प्रकार के पदों का उल्लेख कर दिया। मूल मन्त्र में 'चत्वारि' पद होने के कारण पदों का वर्गीकरण महर्षि का अपना न होकर स्वयं वेद का ही हुआ। अतः इसमें कुछ भी अस्वाभाविक नहीं। 'शास्त्रयोनित्वात्' कहकर व्यास ने वेद को 'शास्त्र' नाम दिया है। इसके अतिरिक्त यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि इन चार पदों का महर्षि ने यास्क प्रतिपादित अर्थ नहीं लिया है। महर्षि ने नाम, आख्यात, उपसर्ग को केवल बुद्धि में निहित, अप्रकाशित शब्द माना है और निपात को सर्वसाधारण मनुष्यों द्वारा बोले जाने, निश्चित अर्थ वाले प्रकाशित, सिद्ध शब्द माना है। जब इस बात पर विचार किया जाये तो यह कहा जा सकता है कि महर्षि का अर्थ पूर्णतया नैरुक्तिक न होकर स्वतन्त्र, तर्क पूर्ण, और बोधगम्य है। वे यास्क और पतञ्जलि के बन्धन में बंधे हुए न थे। प्रत्युत उनके ही समान, और कहीं-कहीं पर उनसे भी अधिक उत्कृष्ट, ऋषि—स्वतन्त्र मन्त्रद्रष्टा थे।

३. "पृथिव्याऽहमुदन्तरिक्षमारुहम्०" (यजु० १७-६७) इत्यादि मन्त्र में अणिमादि की सिद्धि से या अन्तरिक्षयानों की सहायता से ऊपर ब्रह्माण्ड में भ्रमण करना अभिप्रेत नहीं है"—यह कथन आंशिक रूप में ही सत्य है, क्योंकि महर्षि ने इस मन्त्र के भाष्य में पातंजल योग के अनुसार अणिमा आदि सिद्धियों के द्वारा अन्तरिक्ष में गमन माना है। इस आध्यात्मिक अर्थ के अतिरिक्त आधिदैविक और आधिभौतिक अर्थ में अन्तरिक्षयानों की सहायता से ब्रह्माण्ड भ्रमण का अर्थ भी मानना होगा।

४. "प्रत्येक वेद में ऋचायें भी हैं, यजुः भी और साम भी।"..."एक ही मन्त्र तीनों कामों (स्तुति, यज्ञ, गान) में भी आ सकता है और तब एक ही मन्त्र की संज्ञा क्रमशः ऋग्, यजुः या साम हो सकती है।"—स्वामी जी के कथन पूर्णतः विचारणीय हैं। पहले यह समझ लेना चाहिये कि मन्त्रों के ऋग्, यजुः, साम नाम मीमांसादर्शन के अनुसार मन्त्रों की रचना के आधार पर हैं और ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद नामक मन्त्र समूह में होने के कारण विषय के आधार पर हैं। ऋचायें पद्यबद्ध स्तुति (गुणवर्णन) हैं, यजुः गद्यमय यज्ञबोधक (सामाजिक विषय बताने वाले) हैं और साम गान रूप में। ऋचायें (पद्य) यजुः (गद्य) नहीं हो सकतीं, यजुः (गद्यमय) मन्त्र ऋक् और साम नहीं हो सकते। साम (गीतियाँ) यजुः (गद्य) नहीं हो सकतीं। यास्क और महर्षि ने लिखा है कि ऋचाओं से स्तुति और शंसन किया जाता है, यजुओं से यज्ञ करते हैं और सामों से स्तुति गान करते हैं। इसका अर्थ यही प्रतीत होता है कि पद्यमय ऋग्वेद के मन्त्रों से पदार्थों का गुणवर्णन किया जाता है—यह अभिप्राय नहीं है कि जिन किन्हीं (चाहे पद्य चाहे गद्य) मन्त्रों से स्तुति की जाये तो वे ऋचायें कहलाने लगे। इसी प्रकार गद्यमय यजुर्वेद के मन्त्रों के आधार पर यज्ञ—कर्म काण्ड—सामा-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जिक व्यवहार किया जाये—इसका यह अर्थ नहीं कि जिन किन्हीं पद्य या गद्यमय मन्त्रों से यज्ञ किया जाये उन्हें यजुः कह दिया जाये। इसी प्रकार सामवेद के गीति रूप मन्त्रों से परमेश्वर की स्तुति का गान किया जाना चाहिये—इसका यह अर्थ लगाना उचित नहीं कि जिन किन्हीं (ऋग्वेद, यजुर्वेद या अथर्ववेद के) मन्त्रों को गाने लगें तो वे साम कहलाने लगेंगे। ऋग्वेद और सामवेद में यजुः (गद्यमय मन्त्र) नहीं हैं। यजुर्वेद में साम (गीति रूप मन्त्र) नहीं हैं। इस प्रकार वेद के सभी मन्त्र ऋग् भी, यजुः भी और साम भी नहीं हो सकते।

५. "वेदों का वर्तमान विभाजन कृत्रिम या पौरुषेय ही है, वेदज्ञान एक होते हुए भी सुविधा की दृष्टि से हमने इसे चार विभागों में विभाजित कर रक्खा है"—स्वामी जी का यह कथन महर्षि के सिद्धान्त के विरुद्ध होने से माननीय नहीं है। महर्षि ने कहीं नहीं लिखा कि हमने (हम मनुष्यों ने) चार संहिताओं का विभाग किया—प्रत्युत्त सर्वत्र यही लिखा है कि चारों वेद पृथक् पृथक् परमेश्वर द्वारा रचे गये हैं। यह तो पौराणिक मान्यता है कि पहले वेद एक ही था बाद को व्यास जी ने उसके चार विभाग किये। महर्षि की ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका का जो प्रमाण स्वामी जी ने अपने समर्थन में दिया है वह वस्तुतः प्रकरण देखने से स्वामी जी के कथन के विरोध में ही पड़ता है। "गान की दृष्टि से भी संहिताकरण किया गया है"—स्वामी जी के इस कथन को इस प्रकार समझना चाहिये कि संहिताओं के मन्त्रों का उच्चारण भिन्न-भिन्न प्रकार से किया जाना चाहिये। महर्षि ने लिखा है कि ऋग्वेद के मन्त्रों का पाठ द्रुत गति से, यजुर्वेद के मन्त्रों का पाठ मध्यम गति से और साम वेद के मन्त्रों का पाठ विलम्बित गति से किया जाये। अभी तक इस का पालन बहुत कम किया जा रहा है। वेदपाठी आर्य जनता यदि उपर्युक्त रीति से उच्चारण किया करे तो तत्काल पता चल जाया करे कि कौन से वेद का मन्त्र पढ़ा जा रहा है। उच्चारण का यह विधान वेदों के संहिताकरण के पश्चात् का है। इससे यह सिद्ध करना अनुचित होगा कि पहले उच्चारण को ध्यान में रखकर फिर मन्त्रों की अलग अलग संहिताएं बनायी गयीं।

६. "मन्त्रों के गान मात्र या पाठमात्र से कोई सिद्धि नहीं होती है"—स्वामी जी का यह कथन अर्थवाद (अत्युक्ति) है और अंशमात्र में सत्य है, क्योंकि साध्य, लक्ष्य (अर्थज्ञान) के साधन रूप में तो पहले गान या पाठ ही करना होगा और उससे मनोवैज्ञानिक रूप में चित्त की एकाग्रता, मानसिक शांति आदि की थोड़ी सी सिद्धि तो अवश्य ही होती है यह प्रत्यक्ष अनुभव में आता है। हां, यह पूर्णतः ठीक है कि केवल शब्द मात्र पाठ करके रुक जाने और अर्थ समझने का प्रयास ही न करने से "सकल भद्र"—सम्पूर्ण कल्याण की प्राप्ति नहीं हो सकती।

७. स्वामी जी ने प्रश्न किया है कि "यदि वेद की ऋचाओं के त्रिविध या बहुविध अर्थ हैं तो सभी अर्थों के जानने से इष्ट स्वर्ग की सिद्धि होगी अथवा एक अर्थ जान लेने पर भी हो जायेगी"। इस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट है कि सभी अर्थों के जानने से ही इष्ट स्वर्ग की सम्पूर्ण सिद्धि होगी, एक अर्थ जान लेने पर आंशिक ही सिद्धि होगी।

८. स्वामी जी ने लिखा है कि "आर्य समाज द्वारा प्रोत्साहित वेदपारायण यज्ञ उसी प्राचीन (विनियोग, जिससे समाज मात्र का पतन हुआ) कलुषित परम्परा के उदाहरण हैं।" इस कथन में 'कलुषित' शब्द बहुत खटकने वाला है। विनियोगों ने हानि तो पहुंचायी किन्तु एक तो सभी विनियोगों ने हानि नहीं पहुंचायी—कुछ विनियोग बड़े अच्छे रहे हैं और रहेंगे। दूसरे, विनियोगों ने समाज मात्र का पतन भी नहीं किया, कुछ थोड़ी सी हानि अवश्य पहुँचायी। महर्षि ने संस्कार विधि में जो मन्त्र लिखे हैं, वे सभी विनियोग हैं। क्या उसने हानि पहुंचायी? शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रन्थों तथा श्रौतसूत्रों द्वारा प्रतिपादित यज्ञों के विनियोगों को महर्षि ने उपयोगी माना है। केवल इतना उन्होंने अवश्य बताया है कि जहां कहीं यज्ञों में हिंसा और अश्लीलता का विनियोग है उसे न माना जाये। वेदपारायण यज्ञों में न हिंसा होती है और न अश्लीलता, फिर उन्हें कलुषित—कलुष से युक्त—पापपूर्ण परम्परा का उदाहरण बताना अनुचित और महर्षि की मान्यता के सर्वथा विपरीत प्रतीत होता है। वेदपारायण यज्ञों से वेद की सुरक्षा पर्याप्त रूप से होती है। हां, इतना और किया जाये कि मण्डल, अध्याय, सूक्त तथा विशिष्ट मन्त्रों का भावार्थ और सारांश भी बीच-बीच में बताया जाता रहे तथा पौराणिकता की अन्ध परम्परा का प्रवेश न होने दिया जाये।

९. "वेद के सम्बन्ध के तीन (याज्ञिक, ऐतिहासिक, दैवत) पक्ष तो अधिकांश में बेकार हैं—अल्पांश में ही उनका उपयोग है"—स्वामी जी का यह अपना विचार भी उचित और उपयोगी प्रतीत नहीं होता। जो अल्पांश में भी उपयोगी हो वह बेकार नहीं। महर्षि याज्ञिक तथा दैवत पक्ष को स्वीकार करते थे—यह स्वामी जी भी मानते हैं फिर उन्हें बेकार क्यों कहा जाये? यदि हम यज्ञों द्वारा प्रतिपादित परोक्ष रहस्यों को समझ-समझा नहीं सकते तो इसमें तो हमारा ही दोष है, वे पक्ष तो बेकार नहीं हुए। हमें चाहिये कि यज्ञों और देवताओं के रहस्यों को समझें और समझावें। बेकार मान लेने से तो यज्ञ और दैवत पक्ष का जो कुछ अंश बचा हुआ है वह पूर्णतया लुप्त हो जायेगा। इसी प्रकार ऐतिहासिक पक्ष के रहस्यों को समझने-समझाने की आवश्यकता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

१०—स्वामी जी ने महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज द्वारा प्रचालित १३ नवीन विनियोगों की चर्चा की है उनमें से कुछ पर यहाँ विचार किया जाता है।

(१) 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' वाले (ऋ०९-६३-५) मन्त्र में उपर्युक्त सूक्ति उस प्रकरण या प्रसंग में प्रयुक्त नहीं हुई है जिस प्रसंग में हम बहुधा इस का उपयोग करने लगे हैं"—यह लिखते हुए स्वामी जी ने बताया है कि इसमें सोमरस के साथ की जलधारा का वर्णन है—"इन्द्र को बढ़ाते हुए, जलों को प्रेरित करते हुए, समस्त कृत्यों को सफल बनाते हुए, बाधा पहुंचाने वालों को नष्ट करते हुए।" इस पर विचार यह करना है कि उपर्युक्त अर्थ तो आधिदैविक अर्थ में हो गया। आधिभौतिक (जनता से सम्बन्धित व्यावहारिक) पक्ष में सोम की धारा का अर्थ शांत संयत आर्यवीर ही होगा जो इन्द्रं वर्धन्तः—अपने सेनापति को बढ़ाते हुए, अप्तुरः=शीघ्र कार्य करने वाले और विश्व को आर्य (श्रेष्ठ) करते हुए अराव्णः अपघ्नन्तः बाधकों को नष्ट करते हैं। इस प्रकार मंत्र का वर्तमान विनियोग पूर्णतया ठीक प्रतीत होता है।

(2) "अहम् भूमिम् अददाम् आर्याय० (ऋ० ४-२६-२) यहां आर्य शब्द से बिलकुल वह अभिप्राय नहीं है कि इस भूमि पर आर्य ही शासन के अधिकारी है। जैसा भाव सम्भवतः सार्वदेशिक पत्रिका की मुद्रा से व्यक्त होता है।" हमारी समझ से तो सार्वदेशिक ने इस मत्रांश का ठीक ही विनियोग किया है क्योंकि मंत्र का अर्थ बहुत स्पष्ट है कि मैंने आर्य (श्रेष्ठ) के लिए भूमि दी है। आगे के भाग का भी स्पष्ट अर्थ यह है कि मैंने दानी मनुष्य के लिये धन और सुख की वृष्टि की है। मर्त्य का विशेषण 'दाशुषे' ध्यान देने योग्य है। अनार्य दानशील नहीं हुआ करता।

(३) 'स्तुता मया वरदा वेदमाता'० (अथर्व. १९-७१-१) इस मंत्र का देवता गायत्री है। अतः यह संदिग्ध है कि यह मंत्र वेद की स्तुति का द्योतक है, या वेद का अर्थ ज्ञानमात्र है अथवा यह गायत्री की स्तुति है।" स्वामी जी के इस कथन पर हमारा विचार है कि मंत्र में अर्थ को संदिग्ध मानना उचित नहीं। 'वेदमाता' शब्द के सभी अर्थ श्लेष अलंकार द्वारा ठीक हैं। परमात्मा कहता है (और वेदपाठी भक्त को भी कहना चाहिये) कि (१) "मैंने वेद ज्ञान रूपी माता, जीवन निर्माण करने वाली वाणी, का वर्णन किया है। (२) मैं चारों वेद रूपी माता की स्तुति (वर्णन और प्रशंसा) करता हूं। (३) मैं वेद ज्ञान की माता—परमात्मा के गुणों का वर्णन करता हूँ। (४) मैं वेद ज्ञान की माता गायत्री तथा सावित्री मंत्र की स्तुति करता हूं। वेदज्ञान भी गायत्री-गानकर्ता का त्राण (रक्षण) करनेवाला है तथा सावित्री मंत्र भी गायत्री—गानकर्ता की रक्षिका है।

(४) "पर्वपद्धति में तो नये विनियोग ही हैं।" स्वामी जी का यह कथन भी विचारणीय है क्योंकि उसमें नव-सस्येष्टि आदि में विनियुक्त कुछ मंत्र नये न होकर प्राचीन गृह्यसूत्रों के अनुसार हैं।

इनके अतिरिक्त अन्य नवीन विनियोगों के सम्बन्ध में स्वामी जी ने जो कुछ लिखा है, अत्यन्त उपयोगी और प्रशंसनीय है तथा विद्वानों एवं आर्यजनता द्वारा माननीय है। हम ऐसे लेखों के लिये स्वामी जी के आभारी हैं और उनका धन्यवाद करते हैं जिनसे जनता में जागृति और चेतना उदय होती है। वेद गोष्ठियों तथा वेद सम्मेलनों में ऐसे लेखों का पाठ और उनपर विचार विमर्श किया जाना अत्यन्त उपयोगी एवं आवश्यक है।

(पृष्ठ ३७ का शेष)

७. संगीत सम्मेलन और कवि सम्मेलन :—युगधर्म के अनुसार इन दोनों की आवश्यकता है, परन्तु आर्यसमाज ने उसका संपूर्ण लाभ नहीं लिया। आर्यसमाज में भजनोपदेशक ना ही संगीत शास्त्री ना ही कवि, तो भी उनका लाभ हम उठाते हैं और प्रजा पर भी उनका अत्यधिक प्रभाव है। इस दिशा में भी सुधार करना चाहिए और कहीं कहीं तो संगीत और कविता को न समझने वाले कठमुल्ले आर्यसमाजी भी हैं। आज तुलसी रामायण का इतना प्रभाव है। आर्य समाज के कवियों को चाहिये की तुलसी रामायण की तरह लोकप्रिय कविता बनायें जिससे बिना श्रम के सरलता से प्रचार हो। नाटक, काव्य का एक मुख्य अंग है। हमारा उपवेद गंधर्ववेद है और उसकी संहिता नार्य संगीता। नार्य संहिता में संगीत की व्याख्या इस प्रकार की गई हैं ध्यान नर्तनम्, वादनम्' गाना बजाना और नाचना। जिस भाँड-भांडुओं के नृत्य और संगीत को महर्षिजी ने वर्जित किया है उसी कोटि में कठमुल्ले आर्य-समाजी प्रेरक वस्तुओं का भी निषेध करने लगे हैं। "काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्" इसका अर्थ अभी आर्य समाज ने नहीं समझा।

सत्यार्थ प्रकाशः २००) सैकड़ा
ऋषि जीवन : १००) सैकड़ा
मंगाएं बाटें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मद्रास से एक सच्चे आर्य का प्रेरक पत्र

सेवा में

श्री पं० भारतेन्द्रनाथ जी,
अध्यक्ष, दयानन्द संस्थान,
नई दिल्ली-५

परम पूज्य महात्मन्,

सादर नमस्ते।

जब से आप को विष दिलाने के षड्यन्त्र के बारे में "जनज्ञान" में पढ़ा तब से आज तक बहुत दुखी और निराश होकर दिन बीत रहा है। इतिहास में पढ़ा था, पवित्र रोमन साम्राज्य (Holy Roman Empire) के बारे में; एक इतिहासज्ञ ने लिखा कि उसमें पवित्रता न थी; न रोमन, और न साम्राज्य भी। (There was neither holy nor Roman nor Empire!) आर्यसमाज और आर्य समाजियों का हाल आजकल मुझ जैसे लोगों को ऐसा ही लगता है: आजकल बहुतेरे आर्य समाज में, दीखता है "आर्य" नहीं और "समाज" भी नहीं। प्रभु कृपा करें कि आप जैसे सच्चे ऋषिभक्तों और आर्यसमाजी नेताओं को भारत के भविष्य के लिए बचाकर रखें। पूज्य माताजी को हम क्या आश्वासन दे सकते हैं? कितनी कठोर समस्याओं का सामना करके आप और आपकी धर्मपत्नी वेद पताका को आगे बढ़ाकर चलते ही रहते हैं। मैं सदैव प्रार्थना करता रहता हूं कि प्रभु आपको शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बल देते रहें; और आप के आयुष्काल में ही आर्यसमाज का स्वर्णयुग देखने का सौभाग्य दें। हम जैसे क्षुद्र जीवी आर्य जो कुछ हो सकता है इस महान यज्ञ में करते ही रहेंगे। अस्तु।

महात्मन्, मैं मद्रास आर्यसमाज से अपने आप अलग हो गया। उनसे मुझे कोई शिकायत नहीं। जैसे ईसा मसीह ने कहा "वे नहीं जानते वे क्या कर रहे हैं।" मैं आजकल दयानन्द मिशन द्वारा ही आम लोगों को मिलता हूं। जो कुछ पैसा मेरे दोस्त और उनके दोस्त हमारे मिशन को दान के रूप में देते हैं, उसके सहारे प्रचार साहित्य छपाकर मुफ्त वितरण करता हूं। हमारे क्षेत्र में, यानि, वडपलनी, कोडम्बाक्कम्-ट्रस्टपुरम्, प्रदेश में आर्यसमाज स्थापना करने का उद्यम करता रहता हूं। तमिल जनता द्राविड कषगमों के प्रचार से गत पांच दशक से बहुत प्रभावित हैं, और आर्य समाज को (Brahman-Bania Dominated group) ब्राह्मण-बनिया साम्राज्यवादियों का अलग रूप मान रखा है। विरोध, व्यंग्य, हंसी-मजाक, धमकियां सब कुछ सहन कर दयानन्द का काम जारी रखने में मेरा सब फुरसत बीतता है। आज तक मेरा अपना धन लगभग दो सौ रुपये व्यय हुआ है। यह भी उधार लेकर! "सर्वेषामेव ब्रह्मदानं विशिष्यते"—इसको याद रखकर चल रहा हूँ।

दयानन्द मिशन सिर्फ तमिल में वेद और आर्य समाज का प्रचार करता है। सक्रिय सदस्य मैं अकेला हूं। अन्य लोग सिर्फ पैसा देकर चुप रहते हैं। धन भी उतनी आसानी से उनसे नहीं मिलता। एक रुपया वसूल करने के लिये मेरे जेब से एक रुपये से अधिक खर्च करना पड़ता है। फिर भी परवाह नहीं करता, क्योंकि आदमी से "कान्टैक्ट" (Contact) उसके पैसे से अधिक प्रभावकारी रहेगा, भविष्य में, इसलिए।

दयानन्द मिशन ने १९७४ में प्रस्ताव छपाकर काम शुरू किया, "वैदिक सन्ध्या" तमिल में निकाली और मुफ्त में योग्य व्यक्तियों को दे रहा है। १९७५ में आर्य समाज शताब्दी मनायी और वैदिक और सामाजिक साहित्य वितरण किया तमिल में (मुफ्त)। आपकी जानकारी के लिए १९७५ में जो हमने छापा हैं, महर्षि के पूना प्रवचन के इतिहास विषयक और वैदिक राष्ट्रगीत के बारे में, और उसके साथ, यहाँ देता हूं।

मद्रास आर्य समाज के कुछ व्यक्ति सदस्य थे; फिर भी आर्यसमाज से मदद मांगने नहीं गये; कारण पत्र के आरंभ में ही बताया गया; हमारे पंजाबी आर्यों से हमें कोई शिकायत नहीं। उनसे जो कुछ हो सकता वे दिल व जान देकर करते रहते हैं। उनको अपने हथेली में फंसाकर नचाने वाले नाम मात्र आर्य समाजी जो तमिल भाषी हैं, वे आर्य समाज को फिर तमिल जनता के मध्य लेने में उदासीन हैं। यह काम नहीं करने के लिये बहुत कारण वे बताते हैं; ऐसा उनका व्यवहार है। हम सीधे सादे आदमी ऊब चुके हैं, और अपनी शक्ति और समय को बचाने के लिए दयानन्द मिशन के नाम से आर्यसमाज व वेद प्रचार करते रहते हैं, लोगों को जवाब देते हैं, दयानन्द मिशन चलता फिरता आर्य समाज है—Mobile Arya Samaj—तमिल जनता का अपना आर्य समाज है, और जहां हो सकता वहां आर्य समाज स्थापना करके तमिल में प्रचार करने को तैयार है। इत्यादि।

महात्मन्! आपका बहुत समय ले लिया। कृपया क्षमा कीजिए।

इसके साथ महर्षि के "पूना प्रवचन के इतिहास विषयक" भाषण का सारांश "हम कौन हैं?" शीर्षक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

में जो हमने हमारे मिशन की ओर से छपा है, भिज रहा हूं। बहुत ही पारिवारिक और मिशन सम्बंधी उलझनों के कारण हिन्दी अनुवाद नहीं भेज सकता; वैदिक राष्ट्र गीत पहली अप्रैल बाद तमिल जनता के मध्य जा रहा है, स्वामी दयानन्द के भाष्य के साथ; युवाओं की और बालकों की वेद के प्रति अभिरुचि लगाने के लिए एक पुरस्कार योजना भी हमने घोषित की है।

यह सब व्यक्तिगत रूप में आपके श्री चरणों पर, और माता जी के पूज्य पादों पर अर्पण कर रहा हूं। आप मेरे गुरु हैं प्रेरक हैं, मार्गदर्शक है; एकलव्य की तरह, मद्रास के एक कोने में रहकर मैं आप से, आपके दयानन्द संस्थान से, जनज्ञान से सीख रहा हूं, स्वाध्याय कर रहा हूं, यथा-शक्ति मेरे क्षेत्र में वेद का सन्देश और दयानन्द जी महा-राज का आदेश लेकर चलता रहता हूं। इसमें असफल हुआ तो समझिएगा की आत्म बल की कमी से नहीं, धन की कमी से हम रुके हैं। प्रभु आप की सर्वशक्ति दें। इस प्रार्थना के साथ, सदैव आपका, सबको प्रणाम और कुशला-न्वेषण।

जो व्यक्ति मद्रास में प्रचार चाहें वे श्री के० वेलायुधन् से संपर्क करें—सम्पादक

प्रचार के लिए ट्रैक्ट

केवल १०० रु० हजार

१. आर्यसमाज क्या मानता है? श्री मदनमोहन विद्यासागर
२. महर्षि दयानन्द की विशषताएं : महात्मा नारायण स्वामी
३. आर्यसमाज की मान्यताएं : पं० रामचन्द्र देहलवी
४. विश्व को वेद का सन्देश—भारतेन्द्रनाथ
५. आर्य समाज के दस नियम (व्याख्या सहित)
६. निमंत्रण आर्यसमाज का : स्व० पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय
७. आर्यसमाज के १०० वर्ष : पं० भारतेन्द्रनाथ

(आर्यसमाज ने १०० वर्ष के कालखण्ड में विभिन्न क्षेत्रों में क्या योगदान दिया है, इसका प्रेरक विवरण पढ़िए इस ट्रैक्ट में जो अब तक लाखों की संख्या में छप चुका है।)

८. सुख का मार्ग : पं० भारतेन्द्रनाथ
९. आर्य कौन? पं० हरिशरण सिद्धान्तालंकार
१०. स्वास्थ्य का महान शत्रु अण्डा : स्वामी जगदीश्वरा नन्द सरस्वती
११. साम्यवाद—समाजवाद क्यों नहीं? महात्मा नारायण स्वामी
१२. स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश —महर्षि दयानन्द
१३. मूर्ति पूजा से हानियां —महर्षि दयानन्द
१४. आर्योद्देश्यरत्नमाला—महर्षि दयानन्द
१५. वैदिक—संध्या

ये सभी ट्रैक्ट १०० रु० हजार। १५ रु० सैकड़ा दिए जाएंगे। कोई भी ट्रैक्ट १००० से कम हजार के रेट में नहीं भेजेंगे।

आर्यसमाज शताब्दी के उपलक्ष्य में

सत्यार्थ-प्रकाश

(लागत से अत्यन्त कम मूल्य पर मंगाएं)

१. प्रचार संस्करण — बड़ा साइज २००) सैंकड़ा
२. उत्तम प्रचार संस्करण—२५०) सैंकड़ा
३. राज संस्करण —बढ़िया कागज सजिल्द ३५०) सैंकड़ा
४. उपहार संस्करण सर्वश्रेष्ठ कागज पर बढ़िया कपड़े की जिल्द : ४५०) सैंकड़ा
५. शताब्दी संस्करण १०×१५ इंच साइज बढ़िया कपड़े की जिल्द : ५१)
६. अनुपम संस्करण सबसे बढ़िया आर्ट पेपर पर १०० वर्ष में प्रथम बार छपा : १०१)

प्रचार कीजिए।

नई····· नई·····बिल्कुल नयी

सशक्त भाव भरी श्रद्धापूर्ण भाषायुक्त

महर्षि दयानन्द की जीवनी

१६ चित्र : पृष्ठ २१२
तिरंगा बढ़िया कवर : १००) सैंकड़ा

शीघ्रता कीजिए :

भारी संख्या में मंगाकर बांटें

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—सत्यपाल

ग्रामोत्थान का मूल मंत्र : कुटीर उद्योग

भारतवर्ष एक कृषि प्रधान देश है। इस देश की बड़ी जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है। इसलिए अनेक कवियों ने भव्य भारत की विरूदावली गाते हुए यह स्वर भी उबारा है कि 'भारतमाता ग्राम वासिनी' अतः-एव यदि यह भी कहा जाए कि भारतोत्थान का तात्पर्य ग्रामोत्थान भी है तो अतिशयोक्ति न होगी।

भारत को भव्य और महिमा मंडित बनाने के लिए शासन ने स्वतंत्रता के उपरांत अनेक पग उठाए हैं। राजनैतिक क्षेत्र में विगत दस वर्षों में तो अनेक शानदार उपलब्धियां अर्जित की हैं अणुअनुसंधान क्षेत्र में भी उसकी कीर्तिगाथा दिगदिगन्त में फहरा उठी है। औद्योगिक क्षेत्र में भी भारत ने जो प्रगति की है वह सराहनीय है और अब ग्रामीण जन के कल्याण के लिए भी शासन समुचित ध्यान दे रहा है। ग्रामीण ऋण मुक्ति, भूमिहीनों को भूमि आवंटन आदि शासन की ग्रामीण जनों के कल्याण के प्रति सक्रियता के ठोस प्रमाण हैं। यह भी एक तथ्य है कि ग्रामों में केवल कृषक जन ही निवास नहीं करते अपितु अनेक परिवार वह भी हैं कि जो अन्य प्रकार की मेहनत मजदूरी कर जीवन यापन करते हैं।

इन लोगों का उत्थान भी ग्रामों के उत्थान की दृष्टि से नितान्त आवश्यक है। ग्रामों की निर्धन जनता की आर्थिक स्थिति सुधारने हेतु ग्रामों में कुटीर उद्योगों की स्थापना भी नितांत आवश्यक है।

ग्रामीणों को इन उद्योगों को अपनाने के लिए प्रोत्साहन करना भी नितांत आवश्यक है। क्योंकि केवल कृषि कार्य पर निर्भर रहकर ही ग्रामीण जनता का उत्थान सम्भव न हो सकेगा।

इन कुटीर उद्योगों में मोटा कपड़ा, टोकरियां बनाना, ग्रामों के आस-पास के वन क्षेत्र में उपलब्ध वनस्पतियों से भी अनेक उपयोगी पदार्थों का निर्माण किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त तेल उद्योग आदि भी ग्रामों में लगाए जाने वाले कुटीर उद्योग प्रमुख हो सकते हैं।

ग्रामों के विकास के लिए लगने वाले कुटीर उद्योगों आदि के हेतु धन जुटाने के लिए निम्न परिपदों को अपनी आय के साधन खोजने चाहिएं। ग्राम पंचायतों को भी इस दिशा में प्रवृत्त होना चाहिए।

यह भी आवश्यक है कि ग्रामों में कार्य करने वाले ग्राम सेवकों तथा अन्य कर्मचारियों एवम् अधिकारियों को ग्रामीण जन-जीवन और वातावरण से घुल मिलकर कार्य करना चाहिए। उन्हें इस दृष्टि से समुचित प्रशिक्षण दिया जाना भी आवश्यक है। क्योंकि ग्रामों में नियुक्त अधिकारियों के जन-जीवन में घुले-मिले बिना वे ग्राम विकास कार्यों में अपना समुचित योगदान नहीं दे सकते।

ग्रामों को स्वावलम्बी एवम् उत्पादन का केन्द्र बनाने के लिए ग्राम्य विकास कार्यकर्त्ताओं को सेवक के तुल्य कार्य करना होगा। उनके लिए यह आवश्यक है कि वे अपने मन को कृषकों के मन से जोड़कर उन्हें विश्वास में लेकर व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करें। तभी वे ग्रामों के विकास की योजनाओं को क्रियान्वित करने में सही अर्थों में सफल हो सकते हैं।

ग्राम विकास कार्य कर्त्ताओं के लिए यह भी आवश्यक है कि वे ग्रामों की स्वच्छता, खाद बनाने, पेय जल की सुविधाओं के विस्तार एवम् पंचायत उद्योगों की स्थापना में ग्रामीणों को पूरा-पूरा सहयोग प्रदान करें।

ग्रामों की स्थिति में सुधार एवम् सुरक्षा का वायुमंडल बनाने की दृष्टि से ग्रामों की सुरक्षा का भार और कार्य युवकों को सम्भालना चाहिए।

अनेक ग्रामों में मद्यपान आदि की दिशा में अनेक लोग प्रवृत्त हुए हैं। इस प्रवृत्ति की रोक-थाम भी ग्रामों की स्थिति सुधारने के लिए नितांत आवश्यक हैं। आज परिवर्तित मान्यताओं के कारण अनेक लोग सुरापान को भी समुन्नत स्तर का परिचायक मानने की भ्रान्ति का शिकार बन रहे हैं। यदि यह प्रवृत्ति समय रहते न रोकी गई तो अनेक जन-कल्याणकारी कार्य-क्रमों के परिणाम स्वरूप ग्रामीण जीवन में अभिवृद्धि की जो कल्पना की जा रही है, वह साफल्य मंडित न हो सकेगी। अतएव ग्रामों में नियुक्त अध्यापकों तथा ग्राम पंचायतों आदि को इस दिशा में सक्रिय और ठोस पग उठाने होंगे। भारतीय संस्कृति में इसे पांच महापापों में से एक माना गया है।

ग्रामों में चलने वाले विद्यालयों में पुस्तकीय ज्ञान के साथ ही साथ छात्र-छात्राओं को व्यावहारिक ज्ञान दिया जाना भी समय की मांग है। विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में कुटीर उद्योगों के प्रशिक्षण को समाविष्ट करने से भी ग्रामोत्थान की दिशा में ठोस पहल की जा सकती है।

पिछले दिनों सर्वोदय नेता आचार्य विनोवा ने सामाजिक उत्थान के पांच सूत्र प्रस्तुत किए हैं। इन्ही में से एक है मक्खन खाओ—कपड़ा बनाओ भी।

वस्तुतः यह सूत्र ग्रामोत्थान में नितांत ही प्रभावी योगदान दे सकता है। उनका कथन है कि मक्खन खाओ, कपड़ा बनाओ। उनका तात्पर्य है कि ग्रामों में जो मक्खन बने वह खाइए और जितना कपड़ा ग्राम के लिए आवश्यक हो वह बनाइए। उनकी यह धारणा सही है कि गांव वाले यदि अपने दूध से बने मक्खन को नगरों में बेचने के स्थान पर स्वयं खाओं और कपड़ा भी अपना बनाओ तो ग्रामवासी मजबूत बनेंगे।

वस्तुतः उनके इस सूत्र का क्रियान्वयन भी ग्रामीण विकास की महत्वपूर्ण कड़ी बन सकता है, क्योंकि इससे उनमें परावलम्बन के स्थान पर स्वावलम्बन आएगा।

मुद्रक-प्रकाशक-सम्पादक पंडिता राकेश रानी द्वारा सैनी प्रिन्टर्स दिल्ली में छपा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन ज्ञान [साप्ताहिक]
वेद मन्दिर, १५९७ हरध्यानसिंह मार्ग
नई दिल्ली-११०००५। दूरभाष : ५६६६३९

रविवार
२१ मार्च १९७६
९ चैत्र २०३२

रजिस्टर्ड नं०
D-(G) 619

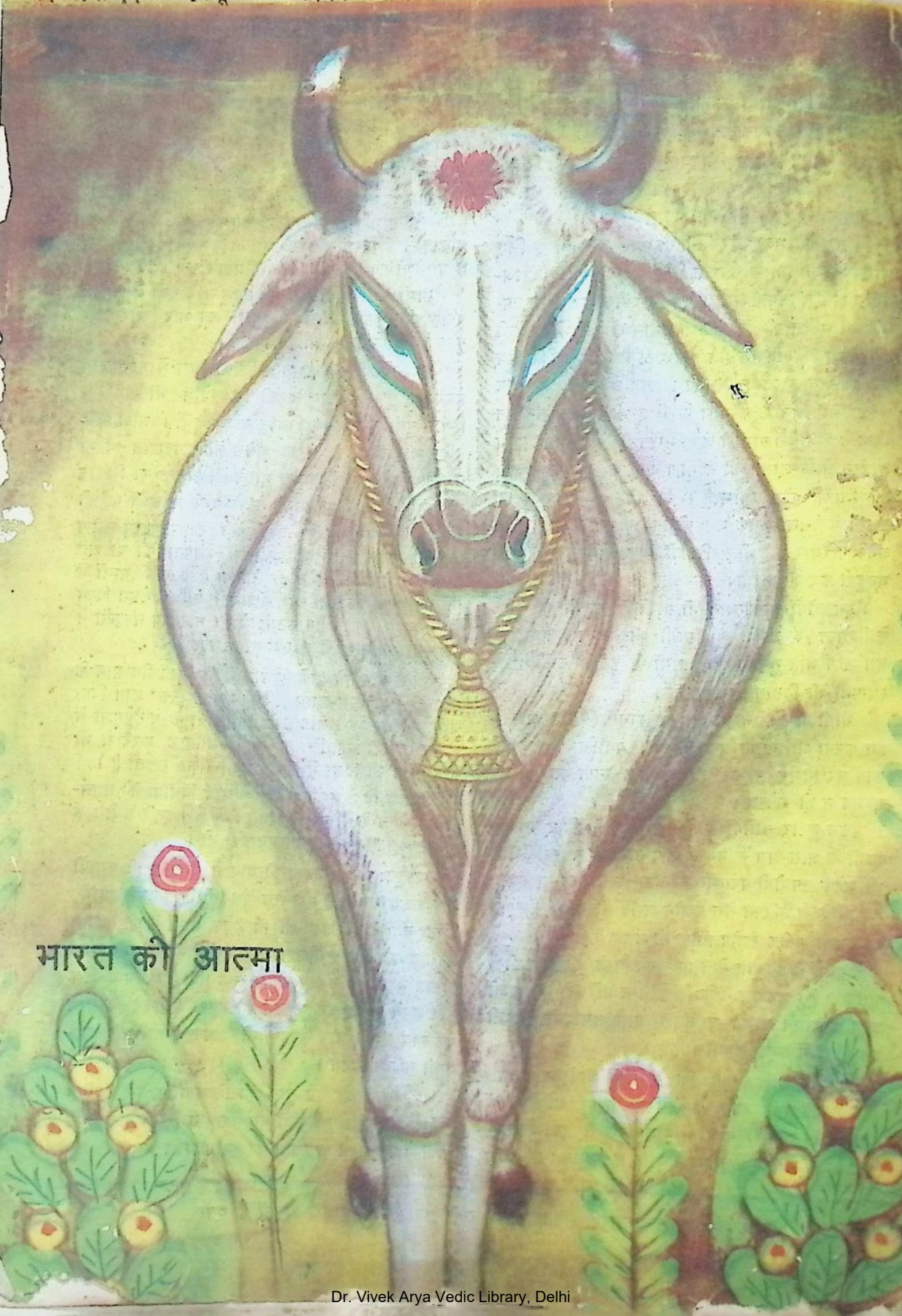

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi